

नई दिल्ली

रविवार, 01 नवंबर, 2026, मूल्य-15.00

राष्ट्रीय

वर्ष-9 अंक-2 पृष्ठ- 8

RNI: DELHIN / 2018 / 76679

Postal Reg. No. DL(C)-05/1425/2025-27

License To Post Without Pre Payment No. U(C)-164/2025-27

Magazine Post Reg. No. DL(DS)-31/MP/25-26-27

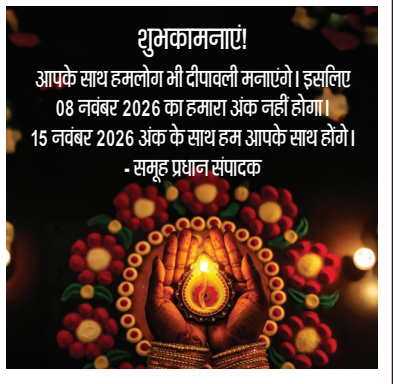


Freedom is in Perils. Defend it with all your might. Jawaharlal Nehru

अरुणाचल सुलग रहा: चीन से खतरा तो है ही, सियांग घाटी में बांध से नई चिंता

वेदांता के नए दांव से फिर सुलग उठा नियमगिरि

www.navjivanindia.com | @navjivanindia | www.nationalheraldindia.com | www.qaumiawaz.com



एसआईआर के खिलाफ लोग

साझा दुश्मन से हो रही है साझी लड़ाई

जैसे-जैसे विरोध प्रदर्शन बढ़ते जा रहे हैं, वोट के अधिकार की रक्षा के लिए शुरू हुआ यह अभियान पूरे भारत में दूर-दूर तक फैल रहा है

नंदलाल शर्मा

एसआईआर (विशेष गहन पुनरीक्षण) के खिलाफ छात्रों और युवा संगठनों के ‘जंतर-मंतर चलो’ आह्वान के दिन 2 अक्टूबर 2026 को सामाजिक कार्यकर्ता निखिल डे केन्द्रीय दिल्ली की सड़कों पर पुलिस के साथ गुथमगुथ्था दिखे। प्रदर्शनकारी नागरिकों को जंतर-मंतर पहुंचने से रोकने के लिए दिल्ली पुलिस ने पूरी ताकत झोंक दी थी। हर रास्ते पर कई स्तर की बैरिकेडिंग के साथ केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल और आरएफ के जवान तैनात थे। आंसू गैस के गोले दागने वाले वाहन और वॉटर कैनन को भी मुस्तैद किया गया था। यह सबकुछ इसलिए था कि लोग जंतर-मंतर जाकर मताधिकार वापस पाने की अपनी लड़ाई के लिए धरने पर न बैठने पाएं। सड़कों पर उतरे लोग तब पुलिस का किला भेद नहीं पाए मगर तीन हफ्ते बाद तस्वीर पूरी तरह बदल चुकी है। छात्रों, युवाओं, किसानों, मजदूरों और नागरिक संगठनों के जज्बे ने हर सड़क को जंतर-मंतर बना दिया है। इस तरह वोट देने का अधिकार बचाने की यह लड़ाई जाति, धर्म, संप्रदाय और क्षेत्र से ऊपर उठ हर गली-कूचे तक पहुंचने लगी है।

पीपुल अगेंस्ट एसआईआर के बैनर तले 145 संगठन, देश के 18 राज्यों के 100 से ज्यादा शहरों में उठ खड़े हुए हैं। यह संगठन सिर्फ जंतर-मंतर पर अपना हक्र वापस पाने की लड़ाई नहीं लड़ रहे हैं, बल्कि मताधिकार छीनने की मोदी सत्ता की अपराधिक साजिशों के खिलाफ जनता को जागरूक भी कर रहे हैं। पीपुल अगेंस्ट एसआईआर की कोऑर्डिनेशन टीम से जुड़े अश्लेष बिरादर कहते हैं कि ‘23 अक्टूबर को देश भर में 150 से ज्यादा जगहों पर नागरिक संगठनों ने प्रोटेस्ट किया है। डेटा और डिटेल्स टीम को न मिल पाने के चलते हम उसे वेबसाइट पर प्रदर्शित नहीं कर पाए हैं, अन्यथा भारत के पूरे नक्शे में आपको कई सौ जंतर-मंतर दिखाई देते।’

पीपुल अगेंस्ट एसआईआर की वेबसाइट 18 राज्यों में 103 जगहों पर विरोध प्रदर्शन का आधिकारिक डेटा दिखा रही है। यह दक्षिण भारत में ज्यादा सघन दिखता है। कर्नाटक, तेलंगाना, केरला और तमिलनाडु में नागरिक संगठनों ने वोट चोरी के खिलाफ जबरदस्त प्रदर्शन किए हैं। 23 अक्टूबर के बाद यह आंदोलन देश के अन्य हिस्सों में तेजी से फैला है। गुजरात और उत्तर पश्चिम क्षेत्र में कम प्रदर्शन के सवाल पर वह कहते हैं कि ‘प्रदर्शन हुआ है, हमारे

पास डेटा नहीं है, इसलिए वहां खाली दिखता है।’

23 अक्टूबर की दोपहर दिल्ली में गोल मार्केट के करीब कालीबाड़ी रोड पर पीपुल्स अगेंस्ट एसआईआर से जुड़े संगठनों ने बड़ा प्रदर्शन किया। इसी दिन देर शाम को एसएफआई, डीवाईएफआई, सीटू और एडवा जैसे संगठनों ने सोनिया विहार के आवासीय इलाके में जागरूकता अभियान चलाया। उत्तर प्रदेश के बलिया सहित अनगिनत जगहों पर संयुक्त किसान मोर्चा से जुड़े लोगों ने प्रदर्शन किया। पंजाब के बरनाला, मनसा, फरीदकोट और फतेहगढ़ में किसान सड़कों पर उतरे। कर्नाटक के कलबुर्गी में संयुक्त किसान मोर्चा और ऑल इंडिया किसान खेत मजदूर संगठन (एआईकेकेएमएस) ने विरोध प्रदर्शन किया। हैदराबाद (तेलंगाना), बशीरहाट (पश्चिम बंगाल), अंडमान (अंडमान और निकोबार), अमलापुरम (आंध्र प्रदेश), अहिल्यानगर (महाराष्ट्र), भुवनेश्वर (ओडिशा), श्रीगंगानगर (राजस्थान), छिंदवाड़ा (मध्य प्रदेश) सहित 150 से ज्यादा जगहों पर नागरिक संगठन सड़कों पर उतरे।

पीपुल अगेंस्ट एसआईआर दरअसल सैकड़ों संगठनों का एक साथ आना है। यह मोदी-शाह के कथित सत्तावाद के खिलाफ नागरिक संगठनों का गठबंधन है। 14 अक्टूबर 2026 को नई दिल्ली स्थित हरकिशन सिंह सुरजीत भवन में बैठक के बाद नागरिक संगठनों ने इसका ऐलान किया। ‘नो एसआईआर नेशनल प्लेटफॉर्म’ के बैनर तले आयोजित इस बैठक में अभिनेता प्रकाश राज, चरिष्ठ अधिवक्ता प्रशांत भूषण, गणेश देवी, परकला प्रभाकर, तारा राव, निखिल डे और नदीम खान सहित कई प्रमुख लोग शामिल हुए। बैठक में एसआईआर के विरोध को समन्वित रूप देने के लिए ‘पीपुल अगेंस्ट एसआईआर’ के नाम से एक साझा मंच का औपचारिक गठन हुआ। साथ ही सभी संगठनों की भागीदारी से एक समन्वय समिति बनाई गई। सचिवालय, जमीनी गतिविधियों, मीडिया, कानूनी सहायता और पब्लिक ऑडिट से जुड़े कामों के लिए अलग-अलग टीमों गठित की गई हैं। कम्युनिकेशन के लिए एक केन्द्रीय वाट्सएप समूह सहित विशेष संचार व्यवस्था बनी हैं।

इंडियन एक्सप्रेस (23 सितंबर 2026) के खुलासे (पिछले 10 महीने में दो चुनाव आयुक्तों ने केन्द्रीय चुनाव आयोग के फैसलों पर 14 बार अपनी असहमति/आपत्ति दर्ज कराई) के बाद देश में एसआईआर और



27 अक्टूबर को हुई सुनवाई के दौरान दिल्ली के त्रिलोकपुरी विधानसभा क्षेत्र में हटाए गए नामों की सूची को प्रदर्शित किया गया

वोट चोरी के खिलाफ दबा हुआ आक्रोश फट पड़ा। नागरिकों संगठनों ने अपने स्तर पर विरोध प्रदर्शन की शुरुआत की, और 2 अक्टूबर 2026 को जंतर-मंतर चलो का आह्वान किया, मगर सरकार ने इस जनान्नाश को दबाने के लिए जंतर-मंतर को किले में तब्दील कर दिया। आवाज उठाने वाला हर नागरिक हिरासत में लिया जाने लगा। 13 अक्टूबर को जंतर-मंतर जाकर तिरंगा फहराने वाले कॉकरोच जनता पार्टी के सौरव दास और आशुतोष रांका को हिरासत में लिए जाने के बाद नागरिक संगठनों की समझ में आ गया कि आगे की लड़ाई लंबी है, और इसके लिए एकजुटता का

मतलब व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, संगठनिक स्तर पर भी एक साथ आना होगा।

एसआईआर के खिलाफ विरोध प्रदर्शनों का सिलसिला थमने का नाम नहीं ले रहा है, ऐसे में जन-सुनवाईयों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो गई है। साल 2002-03 में, ‘मजदूर किसान शक्ति संगठन’ (एमकेएसएस) के शंकर सिंह ने चुनाव आयोग के कहने पर मतदाता सूचियों की जांच के लिए जन-सुनवाईयां आयोजित की थीं। अब 2026 में, वह चुनाव आयोग के कामकाज की जांच करने के लिए जन-सुनवाईयां कर रहे हैं। इस विर्डबना को समझाते हुए वह कहते हैं, “लोग बहुत डरे हुए हैं। उन्हें डर है कि उन्हें देश से निकाल दिया जाएगा, जरूरी सेवाओं तक उनकी पहुंच खत्म कर दी जाएगी, या उन्हें जेल में डाल दिया जाएगा।”

राजस्थान के राजसमंद जिले से आने वाले शंकर सिंह सामाजिक कार्यकर्ता होने के साथ-साथ रंगकर्मी भी हैं। उन्होंने सामाजिक कार्यकर्ताओं अरुणा रॉय और निखिल डे के साथ मिलकर एमकेएसएस की स्थापना की थी। ‘सूचना का अधिकार’ (आरटीआई) कानून लागू करवाने के लिए जानी जाने वाली यह संस्था अब ‘पीपल अगेंस्ट एसआईआर’ से जुड़ गई है।

27 अक्टूबर 2026 को पूर्वी दिल्ली के त्रिलोकपुरी स्थित रामलीला पार्क में एक जन-सुनवाई आयोजित की गई, जिसका नेतृत्व एमकेएसएस, वोटर अधिकार मंच, जन सरोकार और नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन विमेन ने किया। उन्होंने पाया कि त्रिलोकपुरी विधानसभा क्षेत्र के चार मतदान केन्द्रों- इंदिरा कैंप के बूथ 42 और 43, तथा ब्लॉक 34 के बूथ 79 और 80 पर 416 मतदाताओं के नाम गलत तरीके से हटा दिए गए थे।

शंकर सिंह बताते हैं, “300 परिवारों के स्थानीय

निवासी इस जनसुनवाई में शामिल हुए, क्योंकि इन संगठनों के सदस्य घर-घर जाकर लोगों को बता रहे थे कि जिन लोगों के नाम हटा दिए गए हैं, उन्हें वापस जुड़वाने में मदद के लिए एक जनसुनवाई आयोजित की जा रही है।”

त्रिलोकपुरी की जनसुनवाई में शामिल हुए निखिल डे कहते हैं, “हमें लड़ना होगा। यह एक बहुत बड़ा मुद्दा है। लेकिन यह काम सिर्फ नागरिक संगठनों का नहीं है; राजनीतिक दलों को भी इसमें शामिल होना चाहिए, तभी आगे का कोई रास्ता निकल पाएगा। जनसुनवाई लोगों की लोकतांत्रिक आवाज होती है। सत्ता में बैठे लोग विपक्ष को दबा सकते हैं- जिसके नेता इन जनसुनवाईयों में आ रहे हैं, लेकिन वे जनता को नहीं दबा सकते। कोई भी व्यक्ति जनसुनवाई में आकर यह नहीं पूछ सकता कि आपने वह पोस्टर क्यों लगाया या ये नारे क्यों लगाए।” ऐसी ही जनसुनवाईयां कर्नाटक के 100 मतदान केन्द्रों के साथ-साथ तेलंगाना और राजस्थान में भी आयोजित की जा रही हैं।

अलग-अलग पेशेवर पृष्ठभूमि वाले 200 से ज्यादा स्वयंसेवकों ने लोकतंत्र की रक्षा के लिए समय निकालकर इसमें हिस्सा लिया है। दिल्ली के 22 वर्षीय सॉफ्टवेयर इंजीनियर अक्षित त्यागी, मशीन लर्निंग के विशेषज्ञ हैं। उन्होंने ‘पीपुल अगेंस्ट एसआईआर’ (People Against SIR) वेबसाइट बनाई है और वे ऑनलाइन तथा ऑफलाइन- दोनों तरह से इसका समर्थन करते हैं। इस साल जुलाई में जंतर-मंतर 1.0 पर अक्षित नियमित रूप से मौजूद रहते थे। जब एसआईआर के खिलाफ आंदोलन शुरू हुआ, तो वे फिर वापस आ गए।

वकील सागरिका राजोरा प्रवासी मजदूरों के अधिकारों के लिए काम करती हैं।

श्रेष पेज 2 पर ▶

क्यों जरूरी है ईसीआईनेट का स्वतंत्र ऑडिट?



ए.जे. प्रबल

सब चंगा सी - चुनावी व्यवस्था के ध्वस्त होने, चुनाव आयोग के निष्पक्ष न रह जाने और मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) के त्रासद तमाशा बन जाने के बढ़ते साक्ष्यों के सामने भारत निर्वाचन आयोग का यह एक अडियल बचाव है। सुप्रीम कोर्ट में दाखिल 250 पन्नों के अपने हलफनामे में चुनाव आयोग ने 23 सितंबर 2026 को ‘इंडियन एक्सप्रेस’ की खोजी रिपोर्ट में उठाए गए सवालों को नकारा नहीं। बल्कि आयोग ने

याचिकाओं को ‘भ्रामक’ बताकर खारिज कर दिया और दलील दी कि अखबारों की रिपोर्ट अदालत में सबूत नहीं बन सकतीं। हलफनामे का दावा है कि ईसीआईनेट से कोई छेड़छाड़ मुमकिन नहीं है और केवल अधिकृत अधिकारी- यानी निर्वाचक पंजीकरण अधिकारी (ईआरओ) और सहायक ईआरओ (एईआरओ)- ही मतदाता सूची में नाम जोड़ या काट सकते हैं।

इस दावे पर यकीन न करने की कई पुछ्ता वजहें हैं। हलफनामे में खुद यह माना गया है कि एसआईआर के दौरान गोवा के 89 मतदाता सचमुच

वोटर लिस्ट से ‘छूट’ गए थे। यह कह देना कि उनमें से ज्यादातर नाम अब बहाल कर दिए गए हैं, दो बुनियादी सवालों का जवाब नहीं देता: पहला, वे नाम जिसका नेतृत्व एमकेएसएस, वोटर दूसरा, ईआरओ उन्हें तुरंत बहाल क्यों नहीं कर पाया?

अगर ईसीआईनेट वाकई नई दिल्ली स्थित निर्वाचन सदन से रिमोट-चालित नहीं हो रहा है, तो ईआरओ को गलत तरीके से हटाए गए वोटरों के नाम खुद जोड़ने में सक्षम होना चाहिए था। हकीकत यह है कि उस अधिकारी ने इस लाचारी को बार-बार दर्ज कराया और सात दिनों के भीतर निर्वाचन सदन को आठ रिमाइंडर भेजने का दावा किया। उसने चुनाव आयोग की आईटी प्रमुख सीमा खन्ना के संज्ञान में भी इस ‘गड़बड़ी’ को लाया, लेकिन

कोई जवाब नहीं मिला।

इससे भी ज्यादा परेशान करने वाले आरोप पश्चिम बंगाल से जुड़े हैं। वहां चुनाव आयोग का कहना है कि न्यायिक पड़ताल में सही पाए गए नामों को हटाने के लिए जो 16 लाख अपीलें दायर की गईं, उनकी आयोग को कोई जानकारी नहीं थी और न ही वह इसमें शामिल था। हलफनामा कहता है कि राज्य की मुख्य निर्वाचन अधिकारी (सीईओ) लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के प्रावधानों के तहत कार्रवाई के लिए अधिकृत थीं और यह मामला कभी आयोग के पास भेजा ही नहीं गया। लेकिन यह हलफनामा चुनाव आयुक्त एस.एस. संधू की अगस्त 2026 की उस फाइनल नोटिंग का कोई जवाब नहीं देता, जिसमें दर्ज है कि खुद राज्य की उसी सीईओ ने उन्हें बताया था कि उन्हें इस मामले की कोई खबर नहीं है और उन्हें नहीं पता कि एक जैसे आधारों पर इतनी भारी तादाद में अपीलों कैसे दाखिल हो गईं।

इसके बाद, ‘चर्चाग्राम’ नामक सिविक-टेक समूह द्वारा किए गए तकनीकी ऑडिट पर आयोग की रहस्यमयी चुप्पी है। इस समूह ने ईसीआईनेट में एक ऐसे सॉफ्टवेयर फीचर को पकड़ा था जो ईआरओ और एईआरओ को मतदाता गणना प्रपत्रों की समीक्षा करने और ‘नोटिस-व-सुनवाई’ देशबोर्ड देखने से रोक सकता था। जब 19 अक्टूबर को ऑडिट टीम ने इसे पकड़ा, तो यह पाबंदी केवल पश्चिम बंगाल में लागू थी।

श्रेष पेज 2 पर ▶

भर्ती घोटाला और सस्ती दवा को लेकर विवाद

के.ए. शाजी

केरला के राज्यपाल राजेंद्र अलैंकर का विदाई संदेश यूडीएफ सरकार के साथ एक सामान्य टकराव की बानगी नहीं। 15 अक्तूबर को तमिलनाडु के राज्यपाल का पदभार संभालने के लिए रवाना होने से ठीक पहले, अलैंकर ने केरल लोक सेवा आयोग (पीएससी) के अध्यक्ष एम.आर. बैजू समेत सभी 15 सदस्यों को हटाने की सिफारिश कर दी।

इसकी टाइमिंग अहम है। क्राइम ब्रांच पिछली पिनाराई विजयन सरकार के दौरान नियुक्त पीएससी के खिलाफ भर्ती शिकायतों की जांच कर रही थी। परीक्षा में अनियमितताओं, संदिग्ध चयन प्रक्रियाओं और नियुक्तियों के आरोपों ने आयोग की विश्वसनीयता को गंभीर चोट पहुंचाई थी।

निर्वाचित सरकार से मशविरा किए बिना या उसे सूचित किए बिना पूरे आयोग को हटाने की सिफारिश करके, एक संवैधानिक संस्था पर उपजे अविश्वास के संकट को भुनाने की कोशिश की गई है, जिससे संघ परिवार को केरला की सरकारी भर्तियों पर प्रभाव बढ़ाने का मौका मिलने का जोखिम पैदा हो गया है।

योजना बोर्ड नियुक्ति से जुड़ी अर्थशास्त्र की परीक्षा में जांचो गई 228 उत्तर पुस्तिकाओं में से 177 कॉपियों में प्रश्न संख्या 9 का मूल्यांकन नहीं किया गया था, जबकि प्रश्न संख्या 10 से 18 तक को सभी 228 कॉपियों में या तो बिना जांचे छोड़ दिया गया या मूल्यांकन के लिए उनका आवंटन ही नहीं किया गया। इसी मूल्यांकन के आधार पर रैंकिंग तैयार कर नियुक्ति कर दी गई। घपला तब उजागर हुआ जब एक अभ्यर्थी ने सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत अपनी उत्तर पुस्तिका हासिल की। इस जांच और अन्य भर्तियों से जुड़ी शिकायतों ने आयोग को संशय के घेरे में ला दिया।

हर पुख्ता आरोप की गहन जांच होनी चाहिए और दोषियों के खिलाफ सख्त कार्रवाई की जानी चाहिए। लेकिन इन चूकों को किसी मनमाने हस्तक्षेप का जरिया बनाना खतरनाक नजीर पेश करेगा। आयोग के दागी



विवादों के घेरे में केरला के पूर्व राज्यपाल राजेंद्र अलैंकर

होने का यह मतलब नहीं कि राज्यपाल को बेलगाम अधिकार मिल गया।

संविधान के अनुच्छेद 315 और 316 लोक सेवा आयोगों के गठन, उनकी संरचना और नियुक्तियों का निर्धारण करते हैं। अनुच्छेद 317 अध्यक्ष या सदस्य को पद से हटाने के उपाय तय करता है, जिसमें कदाचार की जांच सुप्रीम कोर्ट द्वारा किया जाना अनिवार्य है। केवल अलैंकर की सिफारिश पर्याप्त नहीं। इस पर राष्ट्रपति का फैसला जरूरी है। ये संवैधानिक सुरक्षा उपाय हैं ताकि सरकारी नौकरियों में नियुक्तियां संवैधानिक पदों पर बैठे लोगों की राजनीतिक प्राथमिकताओं की भेंट न चढ़ जाएं।

इससे भी बड़ी चिंता केरला में संघ परिवार के इरादों को लेकर है। पीएससी कोई सामान्य सरकारी विभाग नहीं। कामकाजी परिवारों और वंचितों के उत्थान के लिए सरकारी नौकरियों तक पहुंच एक अहम जरिया है। भर्तियों पर राजनीतिक दखल के दूरगामी नतीजे होते हैं। किसी दाम्गढ़ व्यवस्था की जगह दूसरी वैसी ही व्यवस्था को ले आना सुधार नहीं।

कांग्रेस नेतृत्व वाली यूडीएफ सरकार के सामने कठिन परीक्षा है। उसे निष्पक्ष जांच में सहयोग करना चाहिए, जड़ें जमा

चुके भ्रष्टाचार को बेनकाब करना चाहिए और जनता का भरोसा बहाल करने के लिए पारदर्शी प्रक्रियाएं लागू करनी चाहिए। वह केवल निवर्तमान राज्यपाल का विरोध करने की खातिर पिछली सरकार में नियुक्त आयोग सदस्यों का बचाव नहीं कर सकती। साथ ही, उसे पिछली नाकामियों को इस बात का जरिया भी नहीं बनने देना चाहिए कि संघ परिवार आयोग पर कब्जा जमा ले।

पिनाराई सरकार के समय हुई भर्ती गड़बड़ियों का सहारा लेकर इस बड़े हस्तक्षेप को सही ठहराते हुए राजेंद्र अलैंकर ने केरला में सार्वजनिक संस्थाओं को राजनीतिक कब्जे से बचाने की लड़ाई में एक खतरनाक मोर्चा खोल दिया है। यूडीएफ सरकार को पीएससी को संघ परिवार के पाले में जाने से रोकते हुए भर्ती प्रणाली की मुकम्मल सफाई करनी होगी।

कामयाबी पर भारी सियासत

जो दवा बाजार में 5 लाख रुपये प्रति शीशी मिलती है, वह केरला की सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली में 8,000 रुपये में उपलब्ध है। इस सस्ती जेनेरिक दवा को अपनाने से राज्य सरकार के करोड़ों रुपये बचेंगे और स्पाइनल मस्कुलर एट्रोफी (एसएमए) से

जुझ रहे बच्चों का इलाज लंबे समय तक जारी रखना मुमकिन होगा। इसके बावजूद केरला के माकपा नेताओं ने कांग्रेस सरकार के इस प्रगतिशील फैसले को दवा की सुरक्षा से जुड़े एक बेवजह विवाद में तब्दील कर दिया है।

रिस्टिडप्लाम का इस्तेमाल दुर्लभ आनुवंशिक विकार एसएमए के इलाज में होता है। यह मांसपेशियों को धीरे-धीरे कमजोर कर देता है और जानलेवा भी हो सकता है। स्विस् फार्मा कंपनी रोश की पेटेंट दवा ‘एवरिसडी’ इतनी महंगी है कि आम लोगों की पहुंच से कोसों दूर है। भारतीय कंपनी नैटको फार्मा की जेनेरिक दवा ‘नैटस्मार्ट’ में पूरी तरह वही औषधीय घटक मौजूद हैं और इसे नियामक संस्थाओं से मंजूरी मिल चुकी है। एसएमए तकनीकी समिति का अनुमान है कि जेनेरिक दवा अपनाने से 129 बच्चों के इलाज पर होने वाला राज्य का सालाना खर्च करीब 25 करोड़ रुपये से घटकर 25 लाख रुपये रह जाएगा। इसे अन्य राज्यों में भी दोहराया जा सकता है।

स्वास्थ्य मंत्री के. मुरलीधरन ने साफ

संदेह और चिंताओं की फेहरिस्त लंबी है: क्या नाम काटने से पहले नोटिस देने की कानूनी शर्त पूरी की गई, क्या आपत्तियां सुनी गईं, क्या नाम हटाने के कारण दर्ज किए गए और क्या मतदाताओं के अपील के अधिकार का सम्मान हुआ? ईसीआईनेट, डिजिटल फॉर्म, स्वचालित कार्यप्रणालियों और बैकएंड सॉफ्टवेयर प्रक्रियाओं में दर्ज गड़बड़ियां इस बात का पुख्ता आधार बनाती हैं कि एक स्वतंत्र तकनीकी और कानूनी ऑडिट कराया जाए। इसी से तय होगा कि क्या जानबूझकर कोई हेरफेर की गई, क्या ये गलतियां वाकई महज तकनीकी चूक थीं और क्या वैधानिक सुरक्षा उपायों ने तय नियमों के तहत काम किया?

रोल-आधारित पहुंच, डेटा सुरक्षा और परिचालन लचीलेपन की जांच के चुनाव आयोग के सीमित दायरे में उन बेतुकी गलतियों की पड़ताल होने की उम्मीद नहीं है, जिनमें लिप्यांतरण की चूक से ‘रामहित यादव’ (Ram Hit Yadav) का नाम बदलकर ‘राम ने यादव को मारा’ हो गया; न ही इसमें मामूली, बेतुके और संदिग्ध आधारों पर थोक के भाव ‘तार्किक विसंगति’ दिखाकर नाम काटने की जांच होगी; और न ही सिस्टम के एक्सेस-कंट्रोल की असलियत परखी जाएगी। यह



मतदाता के तौर पर पंजीकरण कराते दिल्ली के लोग

किया है कि यह कदम विशेषज्ञों की सिफारिशों और नियामक मंजूरियों के बाद उठाया गया। केन्द्रीय औषधि मानक नियंत्रण संगठन (सीडीएससीओ) ने कहा कि लागू दिशा-निर्देशों के तहत इस ओरल सॉल्यूशन के लिए अलग से बायोइक्विवलेंस अध्ययन या अतिरिक्त क्लिनिकल ट्रायल की जरूरत नहीं थी। दिल्ली हाईकोर्ट ने जेनेरिक दवा के निर्माण के खिलाफ रोश की याचिका खारिज कर दी थी और सुप्रीम कोर्ट ने भी उस आदेश में दखल से इनकार किया था।

इसलिए वैज्ञानिक और विधिक स्थिति साफ है: ‘नैटस्मार्ट’ मान्य जेनेरिक दवा है, कोई प्रायोगिक दवा नहीं जो परीक्षण दौर में हो। इंडियन मेडिकल एसोसिएशन के केरला अध्यक्ष डॉ. एन. सुल्फी ने विवाद को जेनेरिक दवा के असुरक्षित होने का प्रमाण मानने के बजाय दवा कंपनियों की कारोबारी होड़ का नतीजा बताया है।

जहां केरला की एसएमए तकनीकी समिति के प्रमुख डॉ. के.वी. विश्वनाथन ने दवा की नियामक स्वीकृति और उपयोगिता का बचाव किया है, वहीं डॉ. बी. इकबाल और डॉ. वी. रामनकुट्टी के बयानों ने बहस को नया राजनीतिक आयाम दे दिया है।

वामपंथी विचारों से जुड़े जनस्वास्थ्य कार्यकर्ता डॉ. इकबाल ने सस्ती जेनेरिक दवा से इलाज की इस पहल का स्वागत किया। वहीं, तिरुवनंतपुरम स्थित अच्युत मेनन सेंटर फॉर हेल्थ साइंस स्टडीज के पूर्व प्रोफेसर, बाल रोग विशेषज्ञ और महामारी वैज्ञानिक डॉ. रामनकुट्टी ने 1980 के दशक में सस्ती जेनेरिक दवाओं के लिए वामपंथ के नेतृत्व में चले अभियानों में अपनी भागीदारी को याद किया। उन्होंने इस बात पर अचरज जताया कि वामपंथी दल ही सरकारी नियामक द्वारा अनुमोदित जेनेरिक दवा पर सवाल उठा रहे हैं।

उनकी यह आलोचना खासा है क्योंकि यह आवाज यूडीएफ सरकार के खेमे से नहीं, बल्कि प्रगतिशील जनस्वास्थ्य आंदोलन के भीतर से आई है। उनका तर्क है कि दवा की कीमत को इस बुनियादी सवाल से अलग नहीं किया जा सकता कि इलाज तक पहुंच

किसकी हो पा रही है।

यह राजनीतिक विरोधाभास पिछली एलडीएफ सरकार के फैसलों से और गहरा जाता है। पूर्व स्वास्थ्य मंत्री वीणा जॉर्ज के कार्यकाल में गठित विशेषज्ञ समिति ने ही नैटको की जेनेरिक दवा की खरीद पर बातचीत शुरू की थी और इसे अपनाने की सिफारिश की थी। उस समिति की कार्यवृत्त रिपोर्ट में साफ दर्ज है कि दवा को बाजार में उतारने की मंजूरी मिल चुकी है और अलग से नए अध्ययन की जरूरत नहीं।

इस पृष्ठभूमि के उलट, नेता प्रतिपक्ष पिनाराई विजयन और पूर्व स्वास्थ्य मंत्रियों-पी.के. श्रीमती, के.के. शैलजा और वीणा जॉर्ज- ने उन शीशियों को लेकर खतरे की घंटी बजा दी जिन पर ‘चिकित्सक नमूना’ और ‘केवल क्लिनिकल ट्रायल के लिए’ के लेबल लगे थे। उन्होंने आशंका जताई कि बच्चों को अप्रमाणित प्रायोगिक दवाओं के जोखिम में डाला जा रहा। दवा निर्माता का कहना है कि ये विवादित शीशियां उनके मरीज सहायता कार्यक्रम से आई थीं, और आपत्तियां सामने आने के बाद अस्पताल प्रशासन ने उस पूरे स्टॉक को वापस ले लिया था।

दवा की शीशियों पर लगे इन लेबलों पर चिंतित होना स्वाभाविक था, लेकिन इससे यह साबित नहीं होता कि ये दवा क्लिनिकल ट्रायल के दौर में थीं। सरकार को इस लेबलिंग की स्थिति स्पष्ट करनी चाहिए और सुनिश्चित करना चाहिए कि पीड़ित परिवारों को सही जानकारी मिले। साथ ही नेताओं की भी जिम्मेदारी है कि वे उन दावों को हवा देने से पहले तथ्य जांचें और विशेषज्ञों से राय लें, ताकि लोग बच्चों को जीवनरक्षक दवा देने से कतराने न लगे।

केरला की सस्ती जेनेरिक एसएमए पहल की निष्पक्ष पड़ताल होनी चाहिए। जनस्वास्थ्य की असली परीक्षा इस बात में है कि क्या राज्य महंगी दवाओं के शिकंजे को तोड़ते हुए मासूम बच्चों की जान बचा पाता है। एक दुर्लभ और गंभीर बीमारी से जूझ रहे लाचार परिवारों के लिए सस्ती दवा सियासी नारा नहीं, बल्कि उनकी ज़िंदगी की डोर है। ■

एसआईआर के खिलाफ लोग

साझा दुश्मन से हो रही है साझी लड़ाई



मुख्य निर्वाचन आयुक्त ज्ञानेंद्र कुमार के खिलाफ रैली में प्रदर्शनकारी उठे रहे

लोगों को एसआईआर प्रक्रिया में मदद करने के लिए अपने साथियों के साथ मिलकर उन्होंने ‘वोटर अधिकार मंच’ बनाया, जो अब ‘पीपुल ऑगैस्ट एसआईआर’ की मदद कर रहा है। सागरिका सोशल मीडिया पर अन्य स्वयंसेवकों के साथ तालमेल बिठाती हैं, फील्ड विजिट करती हैं और वर्किंग-ग्रुप की बैठकों में हिस्सा लेती हैं। वह कहती हैं, “यह एक बड़ी लड़ाई है, और लोग अब ज्यादा जागरूक हो गए हैं। आप इसे सड़कों पर देख सकते हैं।”

हरियाणा की एक टेक कंपनी में काम करने वाले 43 वर्षीय विनीत, एमकेएसएस से जुड़े हैं। वह अपने खर्च पर दिल्ली आए ताकि त्रिलोकपुरी की जन-सुनवाई में हिस्सा ले सकें। वहां मंगोलपुरी भी गए, जहां उन्होंने लोगों को ‘फॉर्म 6’ भरने में मदद की। पूरे दिन निवासियों को सलाह देने और उन्हें आगे के कदमों के बारे में समझाने के बाद, वे बस पकड़कर हिसार लौट गए।

याद रखना जरूरी है कि लखनऊ, हैदराबाद हो या फिर मुंबई, नागरिक संगठनों ने विरोध प्रदर्शन 23 अक्टूबर 2026 से काफी पहले ही शुरू कर दिए थे। 16 अक्टूबर को, नई दिल्ली के कर्नाट प्लेस में सैकड़ों लोग ‘लहरा दो तिरंगे’ कार्यक्रम में हिस्सा लेने को इकट्ठा हुए।

इस समाचारपत्र का प्रकाशन **पवन कुमार बंसल** द्वारा हेराल्ड हाउस, 5-ए, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-11002 से **दि एसोसिएटेड जर्नल्स लिमिटेड**, हेराल्ड हाउस, 5-ए, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 की ओर से संपादन **राजेश झा** द्वारा और मुद्रण आर. सी. मल्होत्रा द्वारा दि इंडियन एक्सप्रेस (प्रा.) लिमिटेड प्रेस, ए-8, सेक्टर-7, नोएडा- 201301, उत्तर प्रदेश से किया जा रहा है।





फोटो: गैरी झुकेजा

विकास चमकदार है तो आम लोग खुशहाल क्यों नहीं

आंकड़ों में तेज आर्थिक वृद्धि के बावजूद आम परिवारों की आय घट रही, रोजगार असुरक्षित हो रहा, जीवन-चापन का संघर्ष बढ़ गया

ने इन्हीं संरचनात्मक चिंताओं की ओर ध्यान आकर्षित किया है, जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों की कमजोर वास्तविक मजदूरी और बेहतर नौकरियों की अपर्याप्त उपलब्धता शामिल हैं। ये समस्याएं बुनियादी ढांचे, बैंकिंग और डिजिटल भुगतान के क्षेत्र की उपलब्धियों के साथ-साथ हैं। उपलब्धियों को स्वीकार करने से ही इसकी पड़ताल की जमीन मजबूत होती है कि उनके लाभ किन तबकों तक नहीं पहुंचे। यह इस हकीकत को बयां करता है कि आर्थिक विकास पर्याप्त रूप से समावेशी नहीं।

रोजगार के आंकड़ों का गहराई से अध्ययन करने की जरूरत है। कैब चलाने वाले, निर्माण कार्य में दिहाड़ी मजदूरी करने वाले या पारिवारिक खेत में हाथ बंटाने वाले व्यक्ति को ‘रोजगारशूदा’ मान लिया जाता है। लेकिन यह उसकी आमदनी, आय उतार-चढ़ाव, काम के निश्चित घंटों या बीमारी की स्थिति में सुरक्षा के बारे में नहीं बताता। समान आमदनी के लिए दस की जगह चौदह घंटे काम करना जीवन स्तर में गिरावट को दर्शाता है, जिसे रोजगार की गिनती नहीं पकड़ सकती। रोजगार के ये आंकड़े काम के अनिश्चित और असुरक्षित स्वरूप को छिपा जाते हैं।

सीमित सरकारी नौकरियों के लिए लगने वाली लंबी कतारें केवल बेरोजगारी की सूचक नहीं हैं, बल्कि तयशुदा वेतन, भत्तों और सुरक्षा के आकर्षण को भी दर्शाती हैं। इनमें से कई आवेदक पहले ही कहीं-न-कहीं कार्यरत होते हैं। भर्ती परीक्षाओं की तैयारी में उनका सालों-साल खपाना बताता है कि उनके सामने मौजूद निजी विकल्प कितने कमतर हैं। युवाओं की बेचैनी को इसी पृष्ठभूमि में समझना चाहिए। जब एक स्थिर नौकरी पहुंच से बाहर हो, निराशा स्वाभाविक है। परीक्षाओं में होने वाली देरी और पेपर लीक के मामलों ने इस दर्द को बढ़ाया है। ये अनुभव बढ़ते राष्ट्रीय उत्पादन और युवाओं को मिलने वाले वास्तविक अवसरों के बीच की चौड़ी खाई दिखाते हैं।

पारिवारिक क्रय शक्ति इस स्थिति को समझने का एक और अहम पैमाना है। आम परिवार अपनी आर्थिक स्थिति का आकलन राशन के बिल, मकान के किराये, स्कूल की फीस, दवा-इलाज के खर्च और आने-जाने की लागत से करते हैं। आमदनी महंगाई के साथ तालमेल न बैठा पाए तो नियंत्रित महंगाई भी आम आदमी को खास राहत नहीं पहुंचा पाती।

किसानों के लिए स्थानीय परिस्थितियां राष्ट्रीय विकास के आंकड़ों पर भारी पड़ती हैं। महाराष्ट्र में सूखे की स्थिति फसलों और कमाई को संकट में डाल देती है, जबकि खेती की लागत और कर्ज की देनदारियां जस-की-तस बनी रहती हैं। अन्य क्षेत्रों में हो रही आर्थिक वृद्धि फसल बर्बाद होने की स्थिति में किसान को कोई तात्कालिक सहारा नहीं दे पाती।

शेयर बाजार इस स्थिति में एक और पहलू जोड़ता है। विदेशी निवेशक दो वर्षों से लगातार पूंजी निकाल रहे हैं, जबकि घरेलू निवेशक एसआईपी के जरिये हर माह 30,000 करोड़ रुपये से अधिक का निवेश कर रहे हैं। चर्चा है कि सरकार कैपिटल गेन्स टैक्स में राहत पर विचार कर रही है, क्योंकि शेयर बाजार ने बहुत निराशाजनक रिटर्न दिया है। खुदरा निवेशकों की बढ़ती भागीदारी के चलते, निवेश पर मिलने

बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था में संघर्षरत कारोबार और हताश-निराश बेरोजगार होते हैं। कुछ से बातचीत के आधार पर भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश का समग्र आकलन नहीं किया जा सकता। फिर भी, जनता की बेचैनी के प्रमाण केवल व्यक्तिगत किस्सों तक सीमित नहीं। भारतीय रिजर्व बैंक के सितंबर के शहरी उपभोक्ता विश्वास सर्वेक्षण में ‘वर्तमान स्थिति सूचकांक’ (सीएसआई) 87.9 दर्ज किया गया, जो मार्च 2023 के बाद का सबसे निचला स्तर है और 100 के सामान्य स्तर से काफी नीचे है। लगभग 54.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना था कि पिछले वर्ष की तुलना में सामान्य आर्थिक स्थिति खराब हुई है; केवल 25.3 प्रतिशत ने सुधार की बात कही।

ग्रामीण क्षेत्रों के केवल 20.6 प्रतिशत लोगों ने एक वर्ष पहले की तुलना में आय बढ़ने की बात कही, जबकि 30.5 प्रतिशत ने आय में गिरावट बताई। ऐसे नतीजे आर्थिक तंगी को सतही धारणाओं या राजनीतिक बयानबाजी से परे ठोस आधार देते हैं। हालांकि, आरबीआई के इन सर्वेक्षणों में चोतरफा निराशा नहीं दिखती। शाश्वति परिवार आने वाले साल को लेकर आशाविश्व थे, यानी वर्तमान से असंतोष है तो भविष्य से सुधार की उम्मीदें थी। इसलिए अर्थव्यवस्था की पूरी तरह संकटग्रस्त बताना भी साक्ष्यों के नजरअंदाज करना होगा।

जीडीपी की तेज वृद्धि और परिवारों की आर्थिक चिंता के बीच कोई अंतर्विरोध हो, जरूरी नहीं। जीडीपी पूरी अर्थव्यवस्था में होने वाले कुल उत्पादन को मापती है। यह तय नहीं करती कि अतिरिक्त आय का वितरण कितनी दूर तक हुआ, रोजगार कितना सुरक्षित है या किसी को अपने जीवन स्तर को बनाए रखने के लिए कितना पसीना बहाना पड़ रहा है। मान लीजिए कि किसी कमरे में कोई करोड़पति प्रवेश करता है। कमरे में मौजूद लोगों की औसत संपत्ति तुरंत बढ़ जाती है, भले ही कमरे के किसी भी व्यक्ति की जेब में एक रुपया न बढ़ा हो। प्रति व्यक्ति जीडीपी भी, जो जनसंख्या के अनुपात में उत्पादन को समायोजित करती है, नहीं बता सकती कि एक सामान्य परिवार के साथ क्या बीत रही है।

यह बात मायने रखती है कि विकास का स्वरूप कैसा है। पूंजी-प्रधान गतिविधियां और विशिष्ट सेवाएं भारी उत्पादन और आय पैदा कर सकती हैं, जबकि वे सीधे तौर पर बहुत कम लोगों को रोजगार देती हैं। कॉरपोरेट का मुनाफा मजदूरी की तुलना में बहुत तेजी से बढ़ सकता है, जो हुआ भी है। इन क्षेत्रों में केन्द्रित विकास का अहसास उस आर्थिक विस्तार से बिल्कुल अलग होगा जो विभिन्न पेशों और क्षेत्राल स्तरों में भरपूर रोजगार के अवसर पैदा करता है।

आरबीआई के पूर्व गवर्नर दुव्जरी सुब्बाराव

वेदांता के नए दांव से फिर सुलग उठा नियमगिरि

ओडिशा में बाँक्साइट खनन दोबारा शुरू कराने की वेदांता की कोशिशों के बीच जेल में बंद कार्यकर्ताओं को लेकर नए सिरे से विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं

रश्मि सहगल

ओडिशा के नियमगिरि की तलहटी में स्थित मुनिगुड़ा में 26 अक्टूबर को सैकड़ों ग्रामीण, जिनमें अधिकतर आदिवासी महिलाएं थीं, लादा सिकाका और डॉ. रैंडल सिक्वेरा की रिहाई के लिएम सड़कों पर उतर पड़े। नियमगिरि सुरक्षा समिति (एनएसएस) के अध्यक्ष सिकाका और मेडिको फ्रेंड्स सर्कल के सदस्य डॉ. सिक्वेरा को दस दिन पहले गिरफ्तार किया गया था। उनका गुनाह? वेदांता और अडानी समूह द्वारा बाँक्साइट खनन के खिलाफ चल रहे विरोध प्रदर्शनों में भागीदारी। डॉ. सिक्वेरा ओडिशा और झारखंड के ग्रामीण आदिवासी और दलित समाज में एक जाना-पहचाना नाम हैं, जो देश के दूर-दराज के इलाकों में सेवा देने वाले डॉक्टरों के नेटवर्क से जुड़कर पिछले सात वर्षों से काम कर रहे हैं।

सितंबर में वेदांता के कॉर्पोरेट प्रमुख अनिल अग्रवाल ने नियमगिरि में बाँक्साइट खनन शुरू करने की अपनी मांग को दोहराने के लिए ओडिशा के मुख्यमंत्री मोहन चरण माझी से मुलाकात की थी। मुख्यमंत्री के आधिकारिक आवास से प्रेस कॉन्फ्रेंस करते हुए अग्रवाल ने कहा कि उन्होंने नियमगिरि को ‘तत्काल’ दोबारा खोलने पर चर्चा की है। उनका दावा था कि इससे ‘आदिवासी आबादी को रोजगार के अवसर मिलेंगे और उन्हें विकास की मुख्यधारा से जोड़ने में मदद मिलेगी।’

अग्रवाल ने राज्य में खनन, रिफाइनिंग और डाउनस्ट्रीम विनिर्माण क्षेत्रों में एक लाख करोड़ रुपये के निवेश की योजना का भी ऐलान किया। स्थानीय आदिवासी आबादी के समर्थन का दावा करते हुए उन्होंने कहा कि पूरे नियमगिरि में ग्राम सभाएं आयोजित की गईं और उनमें इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से मंजूरी मिल गई है।

लेकिन जैसा कि हालिया विरोध प्रदर्शनों से जाहिर है, और जैसा कि सिकाका ने अपनी गिरफ्तारी से पहले इस संवाददाता को बताया था, यह बात ‘सफेद झूठ’ थी। ग्रामीण जिस बात पर वास्तव में एकमत हैं, वह है इस इलाके में किसी भी तरह के खनन का कड़ा विरोध।

सिकाका ने कहा: ‘नियमगिरि 660 हेक्टेयर का छोटा सा इलाका है। हम नियम कोंध हैं, जिसका मतलब है झरनों के रखवाले। हमें

अपने जंगलों, पहाड़ों और झरनों की देखभाल का जिम्मा सौंपा गया है। नियमगिरि का शाब्दिक अर्थ ही है ‘कानून का पहाड़’। यह हमारे सर्वोच्च व्यवस्थापक नियम राजा का निवास स्थान है। हर साल हम नियमगिरि पर्वत पर प्रार्थना करने और आभार जताने जाते हैं। हम बाँक्साइट खनन के लिए भगवान को क्यों सौंप दें?’

समाजवादी जन परिषद (एसजेपी) के प्रमुख अफलातून, जिनके संगठन ने भी एनएसएस के बैनर तले 26 अक्टूबर के प्रदर्शन में हिस्सा लिया था, कहते हैं, ‘फर्जी ग्राम सभाओं का मामला, जिनमें कथित तौर पर जाली दस्तखत किए गए थे, कटक हाईकोर्ट तक गया था। लेकिन रायगड़ा के जिलाधिकारी ने अदालत को बताया कि वह खुद इन बैठकों में मौजूद थे और उन्होंने इनकी प्रामाणिकता की तस्दीक की।’

वेदांता का नियमगिरि प्रोजेक्ट 2013 से अधर में है, जब एक दर्जन ग्राम सभाओं ने बाँक्साइट खनन के लिए वन भूमि के डायव्रल का प्रस्ताव सिरे से ठुकरा दिया था। अप्रैल 2013 के ऐतिहासिक फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने जनमत संग्रह का आदेश दिया था, जिसने स्थानीय समुदायों को यह अंतिम फैसला करने का अधिकार दिया कि उनकी वन भूमि दी जानी चाहिए या नहीं। वे ग्रामसभाएं कटक हाईकोर्ट की सीधी निगरानी में हुई थीं, जिसने न्यायिक अधिकारियों को उनकी निगरानी का जिम्मा सौंपा था। दुर्भाग्य से, मौजूदा ग्राम सभाएं उस कार्यपालिका की देखरेख में आयोजित की जा रही हैं जो अपने राजनीतिक आकाओं के आदेशों को बजाने के लिए जानी जाती है।

डामोन पोंगा गांव की रहने वाली और एनएसएस की सदस्य बिनती कट्टका आदिवासियों को दबाने के सरकारी तौर-तरीकों की तोखी आलोचक हैं। वह कहती हैं, ‘हमारी पुश्तैनी जमीन का जबरन अधिग्रहण हमारी आजीविका, हमारी संस्कृति और हमारी आस्था से जुड़ा मसला है। हमारा पूरा अस्तित्व दांव पर लगा है। हम अपनी सभ्यता को बचाने की लड़ाई लड़ रहे हैं।’

एक आदिवासी मुख्यमंत्री के नेतृत्व वाली राज्य सरकार अपने आदिवासी समाज की रक्षा के बजाय ठीक उल्टी दिशा में काम कर रही है। एसजेपी के जिला सचिव कृष्ण सिकाका



नियमगिरी की पहाड़ियों के पास मुनिगुड़ा में आदिवासी, दलित, किसान और विभिन्न जन-आंदोलनों के लोग विरोध में एकजुट हैं

पूछते हैं कि एफआईआर में नाम दर्ज न होने के बावजूद कार्यकर्ताओं को क्यों पकड़ा जा रहा है। उन्होंने कहा कि ‘जब से 2023 में खनन विरोधी प्रतिरोध शुरू हुआ है, पुलिस ने सौ से अधिक दलितों और आदिवासियों को गिरफ्तार किया है।

एसजेपी अध्यक्ष और एनएसएस के सलाहकार लिंगराज आजाद उन्हीं में एक हैं। कृष्ण ने बताया, ‘25 मार्च को आजाद को गिरफ्तार कर उन पर आठ आरोप मढ़ दिए गए। जब उन्हें सभी आरोपों में जमानत मिल गई, तो पुलिस ने एक नया आरोप लगा दिया। वह अब भी जेल में हैं।’ यही हाल वेदांता के सिजिमाली बाँक्साइट खनन प्रोजेक्ट का विरोध करने वाले जमीनी संगठन ‘मां माटी माली सुरक्षा मंच’ के सदस्य हीरामल नायक का है। कृष्ण कहते हैं, ‘28 अगस्त को गिरफ्तारी के बाद से नायक जेल में ही हैं।’ जब दक्षिण ओडिशा के डीआईजी अखिलेश सिंह से स्थानीय पत्रकारों ने पूछा कि कार्यकर्ताओं की जेल की अवधि अनिश्चितकाल के लिए क्यों बढ़ाई जा रही है, तो उनका जवाब था कि वह आजाद जैसे लोगों को रिहा नहीं होने देंगे।

खनन परियोजना को आगे बढ़ाने की अग्रवाल की जल्दबाजी के पीछे एक और वजह है। 1 अक्टूबर को कटक हाईकोर्ट ने

में डाल सकती हैं। (राज्य खनन से मिलने वाले इस राजस्व का उपयोग स्वास्थ्य, शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा, कृषि, स्वच्छता और पेयजल जैसे जनकल्याणकारी कार्यक्रमों के लिए करते रहे हैं।) ऐसे बड़े खाते का विरोध करते हुए फेडरेशन ऑफ इंडियन माइनिंग इंडस्ट्रीज ने दलील दी थी कि खनन उद्योग को बकाये करों के रूप में 1.5 से 2 लाख करोड़ रुपये का नुकसान उठाना पड़ सकता है। अकेले वेदांता समूह पर 2023-24 के लिए 6,249 करोड़ रुपये की रॉयल्टी देय है।

अफलातून जैसे ऐक्टिविस्ट पूछ रहे हैं कि क्या खनन पट्टे देने और राजस्व जुटाने में राज्य की भूमिका को कमजोर करना वेदांता को उसकी देनदारियों से बचा लेगा? हालांकि खनन कंपनियां पर्यावरण, वन और वन्यजीव मंजूरियों को तेज करके नीलाम किए गए खनन ब्लॉकों के आसान अधिग्रहण वाले कानून पर जश्न मना रही हैं, लेकिन आलोचक आगाह करते हैं कि यह हड़बड़ी भारी कीमत चुकाकर आ रही है।

कानूनी विशेषज्ञों का मानना ​​है कि नियमगिरि की पहाड़ियों को खनन के लिए दोबारा खोलने की कोई भी कोशिश आदिवासी समुदायों के मौलिक अधिकारों का हनन होगी। खनन के खिलाफ ग्राम सभाओं के फैसले पर सुप्रीम कोर्ट की 2013 की मुहर एक बाध्यकारी नज़ीर है जिसे आसानी से पलटा नहीं जा सकता। ऐसा करना किसी समुदाय की धार्मिक मान्यताओं पर चोट होगी, जो हमारे संविधान की मूल भावना के खिलाफ है और इसलिए यह एक संवैधानिक चुनौती के समान है।

इस बीच, गिरफ्तार कार्यकर्ताओं की रिहाई के लिए प्रदर्शन जारी हैं। जैसा कि डॉ. सिक्वेरा की मां नैसी ने हुक्मरानों को लिखे अपने खत में कहा: ‘रैंडल आदिवासियों के साथ इसलिए खड़े रहे क्योंकि उन्हें उनके जीवन, स्वास्थ्य, पुश्तैनी जमीन और भविष्य की गहरी फिक्र है। उन्हें डर है कि खनन गतिविधियों से ये कमजोर तबके गंभीर बीमारियों की चपेट में आ जाएंगे और उस पर्यावरण तथा आजीविका से बदेखल हो जाएंगे जिस पर वे निर्भर हैं। गरीबों और मजदूरों को रैंडल की जरूरत है। उन्हें अपने डॉक्टर, अपने हमदर्द मसीहा और उनके दर्द को समझने वाले ईसान की दरकार है।’ ■



‘हम अपनी ही ज़मीन पर शरणार्थी बन जाएंगे’

सौरभ सेन

सियांग नदी के पूरे इलाके में तनाव चरम पर पहुंच चुका है। लंबे समय से सुलग रहा बांध-विरोधी आंदोलन अब ग्रामीण अंचलों की सीमाएं लांघकर अरुणाचल प्रदेश के प्रमुख शहरी केन्द्रों तक फैल गया है। इस पूरे हंगामे की जड़ में 11,200 मेगावाट की प्रस्तावित सियांग अपर बहुउद्देशीय परियोजना (सम्प) है।

अक्तूबर के आखिरी हफ्ते में पूर्वी सियांग, ऊपरी सियांग और सियांग जिले सुरक्षा बलों और स्थानीय प्रदर्शनकारियों के बीच हिंसक झड़पों, सरकारी संपत्तियों की तोड़फोड़-आगजनी और स्थानीय युवा नेताओं की बड़े पैमाने पर हुई गिरफ्तारियों से दहल उठे। हालात बिगड़ते देख प्रशासन ने निषेधाज्ञा (धारा 144) लगाई, इंटरनेट बंद किया और पासीघाट में कर्फ्यू का सख्ती से पालन कराने के लिए केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बल (सीएपीएफ) की 30 कंपनियां शौंक दीं।

इससे पहले 20 अक्तूबर को परियोजना की प्रारंभिक व्यवहार्यता रिपोर्ट के लिए चल रहे सर्वेक्षणों के विरोध में करीब 700-800 युवा, छात्र और स्थानीय नागरिक पासीघाट में जुटे थे। उनकी मुख्य मांग थी कि अरुणाचल प्रदेश विधि-विरुद्ध क्रियाकलाप निवारण अधिनियम (यूएपीए जैसा राज्य का कानून) के तहत हिरासत में लिए गए कार्यकर्ताओं को रिहा किया जाए, सियांग पट्टी से केन्द्रीय सुरक्षा बलों को वापस बुलाया जाए और परियोजना से जुड़ी सभी गतिविधियों पर फौरन रोक लगे।

22 अक्तूबर को प्रदर्शनकारियों ने मिरेकल ग्राउंड में 24 घंटे का शांतिपूर्ण धरना शुरू किया। लेकिन 23 और 24 अक्टूबर को आदि बाने केबांग यूनाइटेड (आबूकू) और उससे जुड़े संगठनों द्वारा बुलाए गए 12 घंटे के बंद के दौरान स्थिति बेकाबू हो गई।

प्रदर्शनकारियों ने पथराव किया और नेशनल हाइड्रोइलेक्ट्रिक पावर कॉर्पोरेशन (एनएचपीसी) तथा स्थानीय प्रशासनिक



प्रस्तावित सियांग परियोजना का विरोध कर रहे लोगों के समर्थन में ईटानगर में रैली

दफ्तरो में तोड़फोड़ की। भीड़ को खदेड़ने के लिए पुलिस ने आंसू गैस के गोले दागे और लाठीचार्ज किया। कई सरकारी और निजी वाहनों को आग के हवाले कर दिया गया, जिससे पासीघाट की सड़कों पर चारों तरफ जली गाड़ियों का मलबा बिखर गया।

प्रशासन ने सख्त रुख अपनाते हुए आंदोलन के प्रमुख चेहरों को गिरफ्तार करना शुरू कर दिया, जिनमें कई युवा नेता और ‘सियांग इंडिजिनस फार्मर्स फोरम’ के प्रतिनिधि शामिल हैं। पुलिस हिरासत में कई कार्यकर्ताओं ने भूख हड़ताल शुरू कर दी है, जिसने स्थानीय लोगों के बीच इस आंदोलन के प्रति समर्थन और सहानुभूति की लहर को और तेज कर दिया है।

*

नई दिल्ली सम्प को केवल बिजली उत्पादन के साधन के रूप में नहीं, बल्कि एक अहम भू-राजनीतिक सुरक्षा कवच के तौर पर देखती है। नदी के ऊपरी बहाव क्षेत्र में स्थित

यह बांध मूल निवासी आदि और गैलो समुदायों के अस्तित्व के लिए खतरा पैदा करता है। सरकार को सुरक्षा बलों की तैनाती कर दमन का रास्ता अपनाने के बजाय लोगों से बातचीत कर उनकी चिंताओं का समाधान करना चाहिए

फैसल महमूद (ढाका) और सौरभ सेन (कोलकाता)

बांग्लादेश के हिन्दुओं को अपनी सुरक्षा के लिए किसी खास राजनीतिक दल की जरूरत नहीं है: शेख हसीना के पतन के बाद एक निर्वाचित सरकार के दौर में संपन्न हुई पहली दुर्गा पूजा का सबसे बड़ा सबक यही दिखता है। देश का सबसे बड़ा हिन्दू धार्मिक उत्सव रिकॉर्ड जनभागीदारी, सरकार के व्यापक सहयोग और अभूतपूर्व राजनीतिक तबज्जो के बीच शांतिपूर्ण तरीके से संपन्न हुआ। यह नई सरकार के लिए एक शुरुआती इम्तहान था कि क्या वह धार्मिक अल्पसंख्यकों को उनके अधिकारों की सुरक्षा बिना किसी राजनीतिक सौदेबाजी या ‘तुष्टीकरण’ के दे सकती है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार, पूरे बांग्लादेश में 33,851 मंडपों में पूजा हुई। प्रशासन ने सहायता के रूप में पांच करोड़ टका आवंटित किए, प्रति मंडप चावल का कोटा बढ़ाकर 600 किलो कर दिया और तीन सार्वजनिक छुट्टियों समेत लगातार पांच दिनों के अवकाश की घोषणा की।

सुरक्षा का बंदोबस्त भी उतना ही कड़ा था। रोजाना करीब 6,500 विशेष रिजर्व बटालियन के जवान तैनात किए गए, जिन्हें सैकड़ों गश्ती वाहनों, खुफिया निगरानी और विशेष दस्तों का सहारा हासिल था। गृह मंत्री सलाहूद्दीन अहमद ने बताया कि सरकार ने संभावित खतरों को भांपकर ऐहतियाती कार्रवाई पर सबसे ज्यादा जोर दिया।

इसका नतीजा सड़कों और सोशल मीडिया पर साफ दिख़ा, जहां ढाका, चटगांव और अन्य शहरों-कस्बों में पारंपरिक सिंदूर लगाए हजारों पुरुष, महिलाएं और बच्चे सड़कों पर थिरकते दिखे। शेख हसीना के शासनकाल में हिन्दू घरों, दुकानों और मंदिरों पर बार-बार हमले होते थे। साल 2021 में दुर्गा पूजा के दौरान कुमिल्ला में कुरान के कथित अपमान की अफवाहों के बाद कई जिलों में हिंसा भड़की थी, जिसने अवामी लोग के उन दावों की हवा निकाल दी थी जिनमें अल्पसंख्यकों को सुरक्षित माहौल देने की बात कही जाती थी। हालाँकि बीएनपी का अतीत भी पूरी तरह बेदाग नहीं है। 2001 के चुनावों में जब बीएनपी के नेतृत्व वाला गठबंधन सत्ता में आया था, तब हिन्दुओं पर हुए हमले बांग्लादेश के हालिया राजनीतिक इतिहास के सबसे परेशान करने वाले अध्यायों में गिने जाते हैं।

यही बीता हुआ कल इस साल के आयोजनों को बेहद महत्वपूर्ण बना देता है। यह संकेत है कि अल्पसंख्यकों की सुरक्षा किसी पार्टी की ऐतिहासिक छवि या उसके धर्मनिरपेक्ष होने के दावों की मोहाता नहीं है। सरकारी फैसले, प्रशासनिक तैयारी और राजनीतिक इच्छाशक्ति जमीनी नतीजों को बदल सकते हैं।

प्रधानमंत्री तारिक रहमान की निजी सक्रियता ने इस माहौल को नया आयाम दिया। ढाका में

केवल रस्मी तौर पर किसी पंडाल में जाने के बजाय प्रधानमंत्री खुद रंगपुर, राजशाही और चटगांव के पूजा स्थलों तक पहुंचे। जब देश का शीर्ष नेता राजधानी से बाहर (जहां अल्पसंख्यकों की राजनीतिक पूछ-परख आम तौर पर कम रहती है) सीधे धार्मिक अल्पसंख्यकों के बीच जाता है, तो संदेश साफ होता है: बांग्लादेश में किसी नागरिक की जगह उसकी धार्मिक पहचान से नहीं, बल्कि उसकी नागरिकता से तय होनी चाहिए।

शांतिपूर्ण दुर्गा पूजा का यह कतई मतलब नहीं है कि बीएनपी ने लंबे समय से चले आ रहे धार्मिक भेदभाव को खत्म कर दिया है। न ही इससे यह साबित होता है कि अवामी लोग पहले जानबूझकर सांप्रदायिक हिंसा भड़काती थीं। लेकिन इस शांतिपूर्ण आयोजन ने उस दलील को जरूर खोखला साबित कर दिया है कि सत्ता में हसीना के बिना हिन्दुओं की सुरक्षा नामुमकिन है। बांग्लादेश अभी धार्मिक पूर्वाग्रहों से पूरी तरह मुक्त नहीं हुआ है। सोशल मीडिया पर नफरत अब भी मौजूद है। अल्पसंख्यक समुदाय आज भी संपत्ति से जुड़े विवादों और न्याय पाने की मुश्किलों से जूझ रहे हैं। पांच दिनों का एक शांतिपूर्ण त्योहार इन बुनियादी सवालों को हल नहीं कर सकता।

इसलिए सरकार की इस उपलब्धि को बहुत सावधानी से आंका जाना चाहिए। इसने यह जरूर दिखाया कि अगर राजनीतिक इच्छाशक्ति हो तो इतने बड़े धार्मिक आयोजन के दौरान भी एक संवेदनशील अल्पसंख्यक समुदाय को सुरक्षित रखा जा सकता है। लेकिन यह सुरक्षा अमला हटने के बाद भी बनी रहेगी या नहीं, यह देखना बाकी है।

*

इसके ठीक उलट, भाजपा शासित पश्चिम बंगाल में दुर्गा पूजा का नजारा पूरी तरह जुदा था। सुवेंदु अधिकारी की अगुवाई वाली सरकार ईद पर पहले ही पाबंदियां लगा चुकी थी और रेड रोड पर सुबह की नमाज की पुरानी रवायत रोक दी गई। पुलिस को संदिग्ध बांग्लादेशियों को पकड़कर डिटेेशन सेंटरों में डालने के निर्देश दिए गए। जहां बांग्लादेश में मुस्लिम आबादी पूजा के आयोजनों में बढ़-चढ़कर शामिल होती दिखी, वहीं पश्चिम बंगाल के मुस्लिम कट्टरपंथी तत्वों के हमलों के डर से घरों से बाहर निकलने की हिम्मत तक नहीं जुटा पाए।

बांग्लादेश में जहां त्योहार का उल्लास हर तरफ छलक रहा था, वहीं पड़ोसी राज्य पश्चिम बंगाल की भीड़ में वह चिर-परिचित जिंदादिली नदारद थी। बड़े पंडालों के इर्द-गिर्द लगे अस्थायी स्टॉलों पर बिरयानी, रोल और तरह-तरह के स्नैक्स (एग डेविल, फिश चॉप) तो बिक रहे थे, लेकिन धंधा एकदम मंदा।

एक कार रेंटल एजेंसी के मालिक ने कहा, ‘इस साल हमारी बुकिंग सामान्य पूजा के मुकाबले



बांग्लादेश में दुर्गा पूजा में दोनों संप्रदायों को साथ लाया गया जबकि प. बंगाल में पूजा की आड़ में अलगाव को बढ़ावा दिया गया

सीमा के दोनों ओर दुर्गा पूजा में क्या अलग था और यह क्यों मायने रखता है

आधी रह गई।’ उन्होंने इस माहौल के लिए 17 अ्तूबर को चोरबागान पूजा पंडाल में मंची भगदड़ को जिम्मेदार ठहराया जिसमें 19 की जान चली गई थी। साथ ही जोड़ा कि ‘लोगों के पास खर्च करने को पैसे की भी तंगी है।’

हादसे और आर्थिक तंगी अपनी जगह हैं जिन पर किसी का वश नहीं, लेकिन पश्चिम बंगाल में उत्सव के रंग में असली भंग प्रशासन की शह पर काम करने वाले संघी संगठनों ने डाला। पूजा से पहले विश्व हिन्दू परिषद, बजरंग दल और कई अनजान धार्मिक नेताओं ने पूजा पंडालों के आसपास मांसहारी खाने की बिक्री और उसके इस्तेमाल पर रोक लगाने की मुहिम छेड़ दी। यह बंगाली जीवनशैली पर उत्तर भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक तौर-तरीकों को थोपने की संघ परिवार की भद्दी कोशिश थी।

बंगाल में भाजपा के सत्ता में आने के बाद पूजा समितियों पर ऐसे नेताओं का कब्ज़ा हो गया, जिन्हें स्थानीय परंपराओं की रती भर समझ नहीं है (जैसे कि खाना और किताबें इस पांच दिवसीय कार्निवल के अहम हिस्से रहे हैं)। सरकारी संदेशों में देवी दुर्गा को ग्यारह भुजाओं वाली दर्शाने की हरकत ने इस अलगाव को और गहरा कर दिया।

यह सांस्कृतिक अतिक्रमण जवद ही राजनीतिक उत्पीड़न में बदल गया। कोलकाता के पॉर्टी रोड

‘खास स्वार्थी समूहों’ द्वारा फैलाई गई ‘गलत सूचनाओं और भ्रांतियों’ का नतीजा है। खांडू ने स्थानीय निवासियों से अपील की है कि वे प्रारंभिक सर्वेक्षण होने दें ताकि परियोजना का एक पारदर्शी और विश्वसनीय डेटा सबके सामने रखा जा सके।

दूसरी ओर, पीढ़ियों से सियांग घाटी में बसने वाले मूल निवासी आदि और गालो समुदायों के लिए यह बांध उनके अस्तित्व पर सीधा वार है। यदि यह प्रस्तावित ढांचा बनता है, तो इसके विशाल जलाशय में 27 गांव जलमग्न हो जाएंगे, करीब 1.5 लाख स्थानीय आदिवासी बेघर हो जाएंगे और गिंगकियोंग तथा गेकू जैसे ऐतिहासिक कस्बे व उपजाऊ कृषि भूमि डूब जाएंगी।

गेकू गांव के निवासी और एसआईएफएफ के प्रतिनिधि ताजोम एंजिंग का कहना है, ‘हम अपनी ही पुरतैनी जमीन पर शरणार्थी बन जाएंगे। सर्वेक्षण पूरा भी हो जाए, तब भी किसी कीमत पर इस बांध का निर्माण नहीं होने देगे। राज्य सरकार को सैन्य बल उतारने के बजाय सीधे प्रभावितों से बात करनी चाहिए।’

स्थानीय लोगों का कहना है कि सियांग नदी केवल पानी का स्रोत नहीं है, बल्कि उनकी पहचान, लोककथाओं और पारंपरिक किसानी विरासत की आत्मा है। विस्थापन के अलावा, भूवैज्ञानिकों और पर्यावरणविदों ने पूर्वी हिमालय के अत्यधिक भूकंप-संवेदनशील क्षेत्र होने के संदर्भ में चेताया है। उनका कहना है कि इतने भारी जलभंडार वाला जलाशय बनाने से बड़े भूकंप का खतरा बढ़ जाएगा और निचले हिस्से में स्थित असम के पर्यावरण और जनजीवन पर भी विनाशकारी असर पड़ेगा।

यह आलेख लिखे जाने तक गतिरोध जस-का-तस बना हुआ था और पूरी सियांग पट्टी में हालात बेहद नाजुक थे। पूर्वी और ऊपरी सियांग के जिलाधिकारियों ने संकेत दिया है कि अगर कानून-व्यवस्था बनी रहे, तो वे गांव के बुजुर्गों और सरकारी प्रतिनिधियों के बीच बातचीत कराने को तैयार हैं। लेकिन आदिवासी नेताओं का दो-टूक कहना है कि

जब तक केन्द्रीय अर्धसैनिक बल गांवों में रहेंगे और उनके कार्यकर्ता जेलों में रहेंगे, तब तक किसी तरह की बातचीत मुमकिन नहीं। अरुणाचल प्रदेश के राजनीतिक नेतृत्व का एक तबका इस पूरे गतिरोध के लिए राज्य सरकार की अदूरदर्शिता को जिम्मेदार ठहराता है।

एक वरिष्ठ नेता ने नाम न छापने की शर्त पर ‘नेशनल हेरल्ड’ को बताया, ‘बांध-विरोधी कार्यकर्ता पूरी लगन और निष्ठा के साथ अपना अभियान चला रहे हैं। नतीजतन, वे ग्रामीणों को समझाने में पूरी तरह कामयाब रहे कि इस परियोजना से उनके आशियाने, आजीविका और भविष्य पर क्या विनाशकारी असर पड़ेगा।’

उनका मानना है कि परियोजना को जबरन आगे बढ़ाने का सरकार का अति-उत्साह उलटा पड़ गया है। उन्होंने कहा, ‘हम अभी सिर्फ प्रारंभिक सर्वेक्षण के दौर में हैं, लेकिन सरकार का बर्ताव ऐसा रहा, मानो परियोजना पूरी तरह तय हो चुकी है। यह केवल शुरुआती अध्ययन है। जब तक यह पूरा नहीं होता, तब तक कोई नहीं कह सकता कि परियोजना को आगे बढ़ाया जाएगा या इसे हमेशा के लिए बंद कर दिया जाएगा।’

आंदोलन को पुलिसिया ताकत से कुचलने के बजाय राज्य सरकार को इस गतिरोध को खत्म करने का कोई व्यावहारिक रास्ता निकालना होगा। इसके लिए जरूरी है कि वह स्थानीय प्रतिनिधियों की आवाज सुने, ग्राम सभाओं को विश्वास में ले और पासीघाट की सड़कों पर उतरे आक्रोशित युवाओं से खुले मन से बात करे।

भारत जब अपनी पूर्वी सीमाओं को अभेद्य बनाने और ऊपरी बहाव वाले अपने प्रतिद्वंद्वी चीन से जल अधिकारों को सुरक्षित करने की जद्दोजहद में जुटा है, तब सियांग घाटी का यह सुलगता प्रतिरोध साफ बताता है कि राष्ट्रीय सुरक्षा के रणनीतिक हितों, आदिवासियों के आत्मनिर्णय के अधिकारों और नाजुक पर्यावरण के बीच संतुलन साधना कितना पेचीदा इम्तिहान है। ■

आखिर खबरें कैसे रिपोर्ट की जाएंगी?

हरजिंदर

मंगलवार, 27 अक्तूबर को सुप्रीम कोर्ट ने 21 समाचार प्रकाशकों की याचिका पर केन्द्र सरकार को नोटिस जारी किया। याचिकाकर्ताओं में मुकेश अंबानी और गौतम अडानी के स्वामित्व वाली कंपनियां भी शामिल हैं। उनका कहना है कि डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन (डीपीडीपी) कानून और इसके नियम ‘पत्रकारिता को अपंग’ कर देंगे।

डिजिटल न्यूज पब्लिशर्स एसोसिएशन की वकील वरिष्ठ अधिवक्ता माधवी दीवान ने समस्या को सीधे शब्दों में रखा। उन्होंने कहा, “अगर मुझे प्रकाशन के लिए किसी की मर्जी पर निर्भर रहना पड़े कि वह सहमति देगा या नहीं, तो खबरें कैसे रिपोर्ट की जाएंगी?”

भारत के सबसे बड़े मीडिया घरानों का एक साथ अदालत पहुंचना असामान्य है। प्रेस की आजादी की लड़ाई में ये संस्थान शायद ही कभी स्वाभाविक सहयोगी रहे हों। ऐसे में उनका एक साथ आना बताता है कि समस्या कितनी गंभीर है।

पहले कानून की बुनियादी संरचना को समझिए। यह कानून निजी डेटा का इस्तेमाल करने वाले किसी भी व्यक्ति या संस्था के लिए संबंधित व्यक्ति की सहमति लेना जरूरी बनाता है। लेकिन पत्रकारिता का काम ही ऐसी जानकारीयां सामने लाना है, जिन्हें कोई छिपाना चाहता है। किसी मंत्री ने कभी अपनी अधोषिप्त संपत्ति पर खबर छापने के लिए सहमति नहीं दी। किसी ठेकेदार ने गड़बड़ी वाले टेंडर पर रिपोर्ट प्रकाशित करने की मंजूरी नहीं दी।

यूरोपीय संघ के जनरल डेटा प्रोटेक्शन रेगुलेशन में पत्रकारिता के काम के लिए विशेष छूट का प्रावधान है। भारतीय कानून में ऐसी कोई छूट नहीं है। किसी व्यक्ति के बारे में जानकारी जुटाने और उसे प्रकाशित करने वाला पत्रकार ‘डेटा फिड्यूसियरी’, यानी डेटा के संरक्षण और इस्तेमाल के लिए जिम्मेदार पक्ष माना जा सकता है। उसे ऐसे डेटा प्रोटेक्शन बोर्ड के सामने जवाब देना पड़ सकता है, जो सरकार से स्वतंत्र नहीं है। इस कानून के तहत 250 करोड़ रुपये तक का जुर्माना लगाया जा सकता है।

वकील और सामाजिक कार्यकर्ता प्रशांत भूषण के मुताबिक, भले ही इस कानून को खास तौर पर पत्रकारों को निशाना बनाने के लिए न बनाया गया हो, लेकिन इसकी व्यापक और अस्पष्ट भाषा इसे ऐसा करने का संभावित हथियार बना देती है। जरूरत पड़ने पर इसका इस्तेमाल किया जा सकता है। यह तय करने वाला कौन होगा कि ऐसी जरूरत कब पैदा हुई? यह अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं है।

किसी कानून का आकलन उसके निर्माताओं की मंशा से नहीं होता। यह देखा जाता है कि कानून लागू करने वालों को उससे क्या करने की ताकत मिलती है। ऐसा अस्पष्ट कानून, जिसके दायरे में कोई भी आ



डीपीडीपी अधिनियम पत्रकारों, विशेष रूप से फ्रीलांसरों और सिटीजन जर्नालिस्ट को नुकसान की स्थिति में डालता है

सकता हो, सरकार को अपने निशाने चुनने की शक्ति देता है। किसी खबर को रोकने के लिए हमेशा प्रतिबंध लगाने की जरूरत नहीं होती। एक नोटिस, नियमों के पालन का दबाव या जुर्माने की धमकी ही किसी संपादक को खबर छापने से पहले दो बार सोचने पर मजबूर कर सकती है।

इस कानून का असर सिर्फ न्यूजरूम तक सीमित नहीं रहेगा। खोजी पत्रकारिता अक्सर सूचना का अधिकार (आरटीआई) कानून के तहत हासिल किए गए दस्तावेजों पर निर्भर करती है। डीपीडीपी कानून ने आरटीआई की धारा 8(1) में भी बदलाव किया है। यह धारा निजी जानकारी से संबंधित है।

अब ऐसी जानकारीयां भी निजता के नाम पर देने से इनकार की जा सकती हैं, जिनकी पहले सार्वजनिक जांच-पड़ताल हो सकती थी। इनमें किसी सरकारी अधिकारी की शैक्षणिक योग्यता या सार्वजनिक ठेके से जुड़ी जानकारीयां शामिल हैं।

सामाजिक कार्यकर्ता अरुणा रॉय के शब्दों में, यह

भारत के स्वतंत्र यूट्यूबर्स और फैक्ट-चेक्स के पास न तो कोई लीगल डिपार्टमेंट है, न ही कोई इन्फोरेंस, और न ही अंबानी जैसी बड़ी बैलेंस शीट

एक परोक्ष हमला है। ऐसे हमले कई बार सीधे हमलों से ज्यादा खतरनाक होते हैं। दो ऐसे अधिकार, जिन्हें एक-दूसरे को मजबूत करना चाहिए, अब आमने-सामने खड़े कर दिए गए हैं।

अगर सरकार डेटा रखने वाली संस्थाओं से ‘कोई भी जानकारी’ मांग सकती है और इससे प्रभावित लोगों को इसकी सूचना देना जरूरी नहीं है, तो पत्रकारों के स्रोतों की गोपनीयता भी खतरे में पड़ जाती है। इस अधिकार के इस्तेमाल में सरकार की मनमानी की आशंका भी बनी रहती है।

कोई स्रोत पत्रकार से भरोसे के आधार पर बात करता है। भरोसा टूटने पर भेद उजागर करने वाला व्यक्ति चुप हो जाता है। प्रेस की आजादी सिर्फ छापों और धमकियों से नहीं मरती। वह चुपचाप भी खत्म होती है जब बेहद अहम जानकारी रखने वाले लोग अपनी सुरक्षा के डर से कुछ भी बताने से पीछे हट जाते हैं।

यहां पत्रकारिता की एक नई जमात का सवाल भी है। ये हैं नागरिक पत्रकार, यानी सिटीजन जर्नालिस्ट।

चीन के मामले में मोदी की दहाड़ हो जाती है म्याऊं-म्याऊं

अशोक स्वैन

नरेन्द्र मोदी का राष्ट्रवाद दोहरे सुरों में बोलता है: पाकिस्तान और बांग्लादेश पर तेज, चीन पर धीमा। पाकिस्तान के खिलाफ छाती ठोकना और बांग्लादेश को नीचा दिखाना सत्ता-राष्ट्रवाद का सार्वजनिक प्रदर्शन बन गया है, जबकि चीन से जुड़े चिंताजनक घटनाक्रमों को सीधे झूठ और कूटनीतिक लफ्फेबाजी में लपेट दिया जाता है। भारत-तिब्बत सीमा पुलिस (आईटीबीपी) प्रमुख द्वारा हाल ही में किया गया यह खुलासा कि अरुणाचल प्रदेश में चीनी सैनिकों के साथ टकराव जारी है, एक बार फिर सरकार द्वारा प्रस्तुत द्विपक्षीय संबंधों और सीमा पर तैनात बलों की वास्तविक परिस्थितियों के बीच के अंतर को साबित करता है।

पाकिस्तान वाली तुलना में एक बात साफ करने की जरूरत है। मई 2025 के संघर्ष-विराम के बाद से पाकिस्तान के प्रति मोदी का रुख कुछ नरम हुआ है जबकि ट्रंप दावा करते रहे हैं कि उन्होंने उच्च टैरिफ की धमकी देकर लड़ाई रुकवाई थी। मोदी ने अब तक बाहरी मध्यस्थता के ट्रंप के बार-बार के दावों का कोई ठोस जवाब नहीं दिया है। इससे हर फैसले पर पूरा नियंत्रण रखने वाले एक सर्वसमर्थ नेता की जो छवि मीडिया ने गढ़ी थी, उस पर आंच आती है। चीन के साथ यह नरमी पिछले दशक में सबसे साफ दिखी जब पाकिस्तान और शेख हसीना के हटने के बाद कुछ हद तक बांग्लादेश के लिए भारत सरकार कड़ा रुख अपनाए रही।

आईटीबीपी के महानिदेशक शत्रुजीत कपूर ने कई जगहों पर चीन से टकराव की पुष्टि की है। जुलाई से अरुणाचल प्रदेश के ताकरसिंग सर्कल में असाफिला के आसपास तनाव की सूचना थी, जिसे सरकार ने नहीं माना। विदेश मंत्रालय ने अब एक अस्पष्ट बयान में आखिरकार माना है कि जब चीनी सैनिक तय लीन-तरीकों से हटकर गश्ती करते हैं तो टकराव होता है। ये स्वीकारोक्तियां किसी शांत सीमा का संकेत नहीं। फिर भी राजनीतिक नेतृत्व जोर देता है कि भारतीय सुधरते संबंधों का जश्न मनाएं, बिना यह स्पष्ट किए कि क्या अनुसुल्झा है, चीन क्या कर रहा है और भारत ने क्या हासिल किया या क्या गंवा दिया।

अत्यंत दुर्गम इलाकों में सैनिकों का साहस सरकार की इस यलमटोल का बचाव करना

और मुश्किल बना देता है। भारतीयों को राष्ट्रीय सुरक्षा की समझ सीमा सुरक्षा अधिकारियों की छिटपुट टिप्पणियों और अरुणाचल प्रदेश के सीमावर्ती गांवों के लोगों की शिकायतों से नहीं जोड़नी चाहिए। जो प्रधानमंत्री देश की ताकत की इतनी डींगें हांकते हैं, उनका फर्ज बनता है कि वह देश को चुनौतियों का हिसाब दें, जिनमें वे चुनौतियां भी शामिल हैं जो उनकी मजबूत छवि को जेन ज़ी के विरोध-प्रदर्शनों से भी अधिक तोड़ सकती हैं।

खतरे के संकेत अक्टूबर 2026 में ही शुरू नहीं हुए। 2017 में भूटान और चीन के बीच ट्राई-जंक्शन के पास विवादित क्षेत्र डोकलाम में चीन के साथ हुई सैन्य तनातनी स्पष्ट करता है कि बीजिंग जोर-जबरदस्ती से अपने क्षेत्रीय दावों को आगे बढ़ाने की मंशा रखता है। इससे भी कहीं गंभीर संकट 2020 में पूर्वी लद्दाख में सामने आया।15 जून को गलवान घाटी की झड़प में कर्नल बी. संतोष बाबू सहित बीस भारतीय सैनिक शहीद हुए। चीन के साथ झड़प में सैनिकों की यह शहादत दशकों बाद हुई थी। फिर भी, 19 जून को मोदी ने ऐलान कर दिया कि न तो कोई भारतीय क्षेत्र में घुसा है और न ही किसी भारतीय चौकी पर कब्जा हुआ है।

जिस समय चीनी आक्रामकता की स्पष्ट

जानकारी देने की जरूरत थी, प्रधानमंत्री ने सच पर पर्दा डालना चुना। अगर कोई चीनी घुसपैठ नहीं हुई थी, तो भारतीय सैनिकों ने किसलिए अपने प्राण दिए? मोदी के बयान ने बीजिंग के पक्ष को विश्वसनीयता दी और भारत की स्थिति को कमजोर किया।

यहां इतिहास का एक असहज अक्स दिखाता है। कारगिल के दौरान परवेज मुशरफ के सैन्य नेतृत्व ने अपने सैनिकों की संलिप्तता से इनकार किया था, जिससे भारत को पाकिस्तानी मृतकों को दफनाना पड़ा। कारगिल में मुशरफ और गलवान में मोदी ने ‘इनकार’ के जरिये अपनी राजनीतिक स्थिति को बचाना चुना, जिसका खामियाजा सैनिकों को भुगतना पड़ा। जिस पाकिस्तान को मोदी और उनकी पार्टी हर उस चीज की कसौटी के रूप में देखती है जिसे भारत को धिक्कारना चाहिए, उसी से अपनी यह समानता मोदी को चुभनी चाहिए।

लद्दाख के एक प्रतिनिधिमंडल के अनुमान के आधार पर राहुल गांधी ने चिंता जताई है कि चीन ने लद्दाख में भारत-नियंत्रित लगभग 2,000 वर्ग किमी क्षेत्र पर कब्जा कर लिया है। सरकार इससे इनकार करती है, और सीमा सड़क संगठन के एक पूर्व प्रमुख ने सुप्रीम कोर्ट में विपक्ष के नेता की टिप्पणियों को चुनौती दी। विपक्ष की बात खारिज कर देने से मूल सवालों का जवाब नहीं मिल जाता: आज भारतीय सैनिक कहां तक गश्त कर सकते हैं और क्या पाबंदियां अब भी लागू हैं?

चीन से बातचीत छह साल से चल रही है, लेकिन सरकार ने यह नहीं बताया कि भारत ने 2020 के संकट से पहले का क्षेत्रीय नियंत्रण और गश्ती पहुंच वापस पा ली है। 21 अक्टूबर 2024 के समझौते में देपसांग और डेम्चोक में कुछ हद तक गश्त का समाधान किया गया, और सैन्य वार्ता 21वें दौर से आगे भी जारी रही, लेकिन यह स्थापित नहीं करता कि पूरे पूर्वी लद्दाख में पहले वाली व्यवस्थाएं बहाल हो गई हैं।

जनरल एम.एम. नरवणे के संस्मरण पर मोदी सरकार का रवैया इस चिंता को बढ़ाता है। पूर्व सेना प्रमुख की किताब ‘फोर स्टार्स ऑफ डेस्टिनी’ रक्षा मंत्रालय की मंजूरी के इंतजार में अप्रकाशित है। रणनीतिक रहस्यों की रक्षा के नाम पर सरकार ने संस्मरण को सामने आने से रोका। राष्ट्रीय सुरक्षा संकट के दौरान लिए गए



भारत, और भारतीयों को चीनी आक्रामकता का एक स्पष्ट विवरण चाहिए। लेकिन इसके बजाय, हमें केवल धोखा मिलता है

निर्णयों के महत्वपूर्ण विवरण तक जनता की पहुंच अनिश्चितकाल के लिए रोकने का बेहतर स्पष्टीकरण होना चाहिए। नागरिकों को यह पूछने का हक है कि यह गोपनीयता सैन्य क्षमताओं की रक्षा करती है या उन लोगों की जिन्होंने राजनीतिक निर्णय लिए। ‘बैटल ऑफ गलवान’ फिल्म से जुड़ा विवाद, जिसका नाम बदलकर ‘मातृभूमि: मे वॉर रेस्ट इन पीस’ किया गया, ऐसे ही सवाल उठाता है। खबरों के अनुसार, इसकी कई जगहों के चीनी नाम रख दिए हैं। उसका सीमावर्ती गांव कार्यक्रम सैन्य अभियानों को सहारा देने की उसकी मौजूदगी और क्षमता को मजबूत करता है। ब्रह्मपुत्र के ऊपरी प्रवाह में थारुलू त्सांगपो पर चीन का विशाल जलविद्युत बांध निर्माण मौजूदा परेशानियों में एक और परीक्षा जोड़ता है। भारत और चीन के बीच जल-बंटवारे का कोई समझौता नहीं है। निचले बहाव की चिंताओं में तलछट, पारिस्थितिक व्यवधान, बांध की सुरक्षा और बाढ़ के पानी के

छोड़े जाने की समय पर जानकारी शामिल है। भारत को ठोस सहयोग और भरोसेमंद आकलन की जरूरत है, न कि इस अस्पष्ट आशवासन की कि उसके हितों की रक्षा की जा रही है। भारत की आर्थिक निर्भरता भी बेड़ी का काम करती है। भारत ने 2025-26 में चीन से लगभग 131.6 अरब डॉलर का आयात किया, जबकि निर्यात लगभग 19.5 अरब डॉलर था। विदेश मंत्री जयशंकर की ‘आत्मसमर्पण’ की स्वीकारोक्ति कि चीन बड़ी अर्थव्यवस्था है, मोदी सरकार की पराजयवादी मानसिकता को दर्शाती है। सवाल यह है कि मोदी के बारह वर्षों के शासन ने भारत की सौदेबाजी की ताकत को मजबूत करने के लिए क्या किया। विनिर्माण क्षमता, तकनीकी दक्षता और भरोसेमंद विदेश नीति की जगह राष्ट्रीय महानता के भाषण नहीं ले सकते।

एससीओ शिखर सम्मेलन के लिए मोदी की 2025 की चीन यात्रा और दिल्ली में 2026 के ब्रिक्स शिखर सम्मेलन में शी जिन्पिंग की मौजूदगी बचाव योग्य राजनयिक लोकाचार हैं। लेकिन जब टकराव जारी है, तो शिखर सम्मेलनों की तस्वीरें यह साबित नहीं कर सकतीं कि भारत की स्थिति में सुधार हुआ है। हमारी सरकार को

प्रकाशकों की ओर से पेश वकील ने सावधानी से कहा कि उनके मुबक्कल ‘पारंपरिक मीडिया संस्थान’ हैं। उन्होंने यह भी जोड़ा कि “नागरिक पत्रकारों को लेकर कुछ बहस हुई है।” यह बहस अहम है।

कानून के मुताबिक, अगर कोई पत्रकार किसी व्यक्ति के बारे में जानकारी जुटाता और प्रकाशित करता है, तो उसे उस व्यक्ति की सहमति लेनी होगी। दिल्ली की पत्रकार प्रज्ञा सिंह इस शर्त को अव्यावहारिक मानती हैं। वह कहती हैं, “मैं नियमित रूप से लोगों का इंटरव्यू करती हूं और मौके पर जाकर जानकारी जुटाती हूं। यह उम्मीद अवास्तविक है कि मैं हर बातचीत से पहले सहमति पत्र लेकर चली और उस पर लोगों के हस्ताक्षर कराऊं।”

भारत में स्वतंत्र रूप से काम करने वाले यूट्यूबर, ब्लॉग लेखक, पांडेकार्टर और एक्स पर तथ्य-जांच करने वाले पत्रकारों के पास न कानूनी विभाग है, न बीमा और न ही अंबानी जितनी बड़ी आर्थिक ताकत। वे ऐसे कई काम भी करते हैं, जिन्हें करने से बड़े मीडिया संस्थान अक्सर हिचकते हैं।

अगर अनुपालन के लिए पूरी टीम रखने वाली कंपनी को यह कानून अव्यावहारिक लगता है, तो मोबाइल फोन लेकर काम करने वाला अकेला पत्रकार इसका पालन करने की कोशिश भी नहीं करेगा। आशंका यही है कि वह अपना काम ही बंद कर देगा। ऐसा कानून, जिसका मुकाबला सिर्फ अमीर कर सके, पत्रकारिता को अमीरों का खेल बना सकता है।

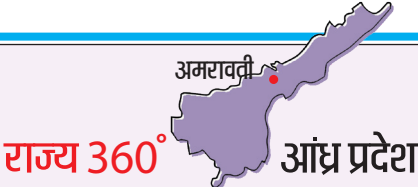
सरकार का रवैया इस चिंता को और गहरा करता है। निजी संस्थाओं के लिए सूचना देने और सहमति लेने की शर्तें सख्त हैं। दूसरी ओर, ‘राज्य की सुरक्षा’ जैसे उद्देश्यों के लिए सरकार को व्यापक छूट मिली हुई है।

जब निगरानी के दायरे में आने वालों के लिए नियम सख्त हों और निगरानी करने वालों के लिए ढीले, तो इसे ‘निजता की सुरक्षा’ नहीं कहा जा सकता। यह सत्ता के असमान संतुलन का मामला है।

इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं कि डेटा की सुरक्षा जरूरी नहीं है। भारतीय नागरिकों को डेटा लीक, उनकी गतिविधियों की प्रोफाइलिंग और निजी जानकारी की मनमानी बिक्री से बचाने की जरूरत है। लेकिन एक अच्छा निजता कानून ताकतवर लोगों से आम नागरिकों की रक्षा करता है। उसे ताकतवर लोगों के लिए जनता से सच छिपाने का हथियार नहीं बनना चाहिए।

समाधान मुश्किल नहीं है। पत्रकारिता के लिए स्पष्ट और प्रभावी छूट होनी चाहिए। यह छूट बड़े मीडिया संस्थानों के साथ-साथ स्वतंत्र पत्रकारों और नागरिक पत्रकारों की भी मिले। पत्रकारों के स्रोतों की गोपनीयता की रक्षा हो।

सुप्रीम कोर्ट ने इस मामले की अगली सुनवाई 17 नवंबर को तय की है। लोकतंत्र निजता और प्रेस की आजादी, दोनों की रक्षा कर सकता है। सवाल है, क्या वह ऐसा करेगा? ■



क्या अराजकता ही अब नया कानून है?

सुरेश धरूर

आंध्र प्रदेश में 1 नवंबर को 13 नगर निगमों, 87 नगरपालिकाओं और नगर पंचायतों सहित 100 शहरी स्थानीय निकायों और जिला परिषद क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों (जेडपीटीसी), मंडल परिषद क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों (एमपीटीसी) की ग्रामीण सीटों पर चुनाव होने हैं। यह मुकाबला 663 में से 659 जेडपीटीसी और 9,858 में से 9,829 एमपीटीसी सीटों पर होगा। सब कुछ ठीक रहा, तो 28 जिला प्रजा परिषदों में लगभग 2.81 करोड़ मतदाता अपने लोकतांत्रिक अधिकार का इस्तेमाल करेंगे। हालांकि, नामांकन प्रक्रिया में लोगों को रोकने, डराने-धमकाने की घटनाएं सामने आईं। मतदान केन्द्रों, नामांकन स्थलों और मतगणना केन्द्रों पर केन्द्रीय बलों की तैनाती और बड़े पैमाने पर सीसीटीवी कैमरे लगाए जाने से राज्य एक तेलुगु राजनीतिक रणक्षेत्र में तब्दील होता दिखा।

आरोप के समर्थन में वीडियो क्लिप्स मौजूद हैं जिनमें साफ दिख रहा है कि उपद्रवी

नामांकन पत्र छीन रहे हैं, विपक्षी उम्मीदवारों के साथ मारपीट हो रही, लेकिन वर्दीधारी खामोशी से देखते रहे। एक वीडियो में, एक महिला पुलिसकर्मी एक पूर्व मंत्री (जो खुद भी एक महिला हैं) को धक्का देकर ज़मीन पर गिरा देती है और उन्हें अपने ही घर से बाहर निकलने से रोकती है। इस घटना से स्तब्ध एक नागरिक ने कहा: “भई, यह बिहार नहीं, आंध्र प्रदेश है!”

नगर निकाय चुनाव कराने पर सुप्रीम कोर्ट के निर्देशों के खुलेआम उल्लंघन के लिए राज्य निर्वाचन आयुक्त (एसईसी) अनिल चंद्र पुनेथा पर सवाल उठे। विपक्षी वाईएसआर कांग्रेस पार्टी (वाईएसआरसीपी) का आरोप है कि पुनेथा मुख्यमंत्री एन. चंद्रबाबू नायडू के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार के इशारे पर कठपुतली की तरह काम कर रहे हैं। वाईएसआरसीपी के अध्यक्ष और पूर्व मुख्यमंत्री वाई.एस. जगन मोहन रेड्डी और उनकी पार्टी के लोगों ने पुनेथा पर सत्तारूढ़ दल के इशारे पर विपक्षी नेताओं के लोकतांत्रिक अधिकार कमजोर करने की

कोशिश का आरोप लगाया है। जगन ने कहा, “एसईसी पर हमें कोई भरोसा नहीं है, और न ही हम डीजीपी हरीश कुमार गुप्ता और उनकी टीम पर भरोसा कर सकते हैं।”

वाम दलों के समर्थन के साथ वाईएसआरसीपी ने सर्वोच्च न्यायालय की देखरेख और एक ‘एमिकस क्यूरी’ (न्याय मित्र) की मौजूदगी में चुनाव कराने की मांग की। सत्तारूढ़ तेलुगु देशम पार्टी (टीडीपी) और वाईएसआरसीपी कार्यकर्ताओं के बीच झड़पों की खबरों के बीच, जगन ने कहा, “हमें नहीं लगता कि दबाव, लक्षित हिंसा और सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों के खुले उल्लंघन वाले मौजूदा माहौल में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव संभव हैं।” विपक्ष ने चुनावी गड़बड़ियों में कथित तौर पर शामिल 54 पुलिस अधिकारियों की पहचान कर उन्हें हटाने की मांग की है और उन पर विपक्षी उम्मीदवारों पर हमले कराने में सत्तारूढ़ दल से मिलीभगत का आरोप लगाया है।

21 अक्टूबर को, सुप्रीम कोर्ट ने एसईसी को उम्मीदवारों को नामांकन दाखिल करने

से रोकने वाले मामलों में जांच का निर्देश दिया था। कोर्ट ने कहा कि जहां शिकायतें सही मिलें, वहां उम्मीदवारों को नामांकन के लिए कम-से-कम 48 घंटे का समय दिया जाए, और चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों की अंतिम सूची के प्रकाशन को 25 अक्टूबर तक टाल दिया जाए। 23 अक्टूबर को, वाईएसआरसीपी ने फिर से सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाकर राज्य सरकार पर कोर्ट के निर्देशों के उल्लंघन का आरोप लगाया। चुनाव 28 अक्टूबर को होने तय थे, लेकिन एसईसी को इन्हें टालकर 1 नवंबर को कराना पड़ा और चार शहरी स्थानीय निकायों के 72 वार्डों के लिए नामांकन प्रक्रिया फिर से खोलनी पड़ी। मुख्यमंत्री नायडू ने विपक्ष पर अदालतों को गुमराह करने का आरोप लगाया। उन्होंने दावा किया कि “विपक्ष हिंसा फैला रहा है और अदालतों में याचिकाएं दायर कर रहा है। झूठे मुकदमों के साथ अदालत में जाकर, वे एक तरह से ‘आपराधिक वादी’ बन गए हैं। उन्होंने हाईकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट को गलत जानकारी दी है।”



माई-बहनों की आपसी प्रतिद्वंद्विता

आंध्र प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष वाई.एस. शर्मिला और उनके भाई तथा पूर्व मुख्यमंत्री वाई.एस. जगन मोहन रेड्डी के बीच की खींचतान ने तब और नाटकीय मोड़ ले लिया जब मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू ने अपने कट्टर विरोधी पर निशाना साधने के लिए ‘महाभारत’ का जिक्र कर दिया। नायडू ने इस पारिवारिक विवाद का राजनीतिक फायदा उठाने की कोशिश की और जगन की तुलना मथुरा के अत्याचारी राजा और भगवान कृष्ण के ‘कंस मामा’ से कर दी। इस पूरे विवाद की शुरुआत एक शादी की तैयारियों से हुई। शर्मिला ने नवंबर में होने वाली अपनी बेटी की शादी के लिए जो निमंत्रण भेजे, उनमें शादी की जगह के तौर पर बेंगलुरु स्थित पारिवारिक संपत्ति ‘थेलाहंका पैलेस’ का जिक्र था। इससे जगन भड़क गए, क्योंकि संपत्ति को लेकर उनका अपनी बहन के साथ पहले से ही विवाद है। उन्होंने बहन को पत्र लिखकर साफ कर दिया कि वे यहां शादी नहीं होने देंगे, क्योंकि यह उनकी अपनी ‘इकलौती संपत्ति’ है।

उन्होंने पत्र में लिखा, “इतने व्यापक स्तर पर आयोजित कार्यक्रम में कैटरिंग स्टाफ, डेकोरेटर, इवेंट मैनेजर, वीडियोग्राफर और

फोटोग्राफर जैसे कई सर्विस प्रोवाइडर तो शामिल होंगे ही, मेहमानों का आना-जाना भी लगा रहेगा। इससे सुरक्षा संबंधी चिंताएं उत्पन्न होंगी। प्रॉपर्टी और आसपास के इलाकों की तस्वीरें और वीडियो बाहर जाने से भी गंभीर सुरक्षा जोखिम पैदा हो सकते हैं।” उनके एक सहयोगी ने बताया, “यह शर्मिला के लिए एक बड़ा झटका है। रिश्तेदारों और जानी-मानी हस्तियों को शादी के निमंत्रण पहले ही भेजे जा चुके हैं। अब उन्हें किसी दूसरी जगह (वेन्यू) की तलाश करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा।”

विवाद में कूदते हुए, चंद्रबाबू नायडू ने जगन पर “नीचता और पारिवारिक मूल्यों के प्रति सम्मान न रखने” का आरोप लगाया। मुख्यमंत्री ने कहा, “वे संपत्ति विवाद को लेकर अपनी ही मां और बहन के साथ गलत व्यवहार कर रहे हैं। पारिवारिक संपत्ति में शर्मिला का भी हिस्सा है, लेकिन वे अपनी भतीजी की शादी में रुकावट डाल रहे हैं। वे महाभारत के कंस जैसा बर्ताव कर रहे हैं।”

निजी हमला जारी रखते हुए, नायडू यहां तक कह गए कि जगन एक मुख्यमंत्री, पार्टी नेता, बेटे, बड़े भाई और यहां तक कि एक नागरिक के रूप में भी पूरी तरह विफल रहे हैं उफ़र। ■



विपक्ष ने चुनावी अनियमितताओं

में कथित भूमिका के लिए 54

पुलिसकर्मियों की पहचान की है

गरिमामय बुढ़ापे को सरकार का सहारा

केरला के नए वरिष्ठ नागरिक संरक्षण कानून ने बुजुर्गों की उपेक्षा, संपत्ति हड़पने और फर्जी केयर सेंटरों पर कड़े कानूनी शिकंजे की राह खोली

के.ए. शाजी

त्रिशूर जिले के तिरुविल्वामला में 86 वर्षीय धनलक्ष्मी जिस कमरे में रहने को मजबूर हैं, उसमें बारिश का पानी सीधे टपकता है। मरम्मत के नाम पर उनके घर के कुछ हिस्से तोड़ दिए गए हैं। जिला स्तरीय पंचाट द्वारा तय किया गया 6,500 रुपये का मासिक भरण-पोषण भी उनकी बेटी ने नहीं भेजा है। धनलक्ष्मी ने अपनी संपत्ति इस वादे पर बेटी के नाम की थी कि बुढ़ापे में वह उनकी देखभाल करेगी। मगर आज वह वित्तीय सहारे और सिर पर एक सुरक्षित छत, दोनों से महरूम हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर माता-पिता और वरिष्ठ नागरिक भरण-पोषण एवं कल्याण अधिनियम, 2007 बुजुर्ग माता-पिता को अपने बच्चों से गुजारे की मांग करने का कानूनी अधिकार देता है। लेकिन अदालत का कोई फैसला न तो जेब में पैसे की गारंटी दे सकता है और न ही किसी जर्जर छत को सुरक्षित आशियाना बना सकता है। बुजुर्गों के लिए ऐसे हालात बेहद त्रासद होते हैं। धनलक्ष्मी की आपबीती यह साबित करने को काफी है कि वरिष्ठ नागरिकों की सुरक्षा को सिर्फ निजी पारिवारिक समझौतों के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता।

इसी पृष्ठभूमि में ‘केरलम वरिष्ठ नागरिक (देखभाल एवं अधिकार संरक्षण) विधेयक, 2026’ की अहमियत काफी बढ़ जाती है। मुख्यमंत्री वी.डी. सतीशन द्वारा 13 अक्टूबर को पेश इस विधेयक को 26 अक्टूबर को केरला विधानसभा की विषय समिति ने सर्वसम्मति से पारित कर दिया।

यह कानून देश में बुजुर्गों के हक में अब तक का सबसे सख्त कानूनी ढांचा बनने की उम्मीद जगाता है, जिसमें उपेक्षा और शोषण के खिलाफ व्यापक सुरक्षा उपाय हैं। इनमें प्रताड़ना, वरिष्ठ नागरिकों की संपत्ति पर अवैध कब्जा और गैर-पंजीकृत वृद्धाश्रम चलाने जैसे अपराधों के लिए जेल और जुर्माने का प्रावधान है।

केरला में जीवन प्रत्याशा बढ़ने और जन्म दर घटने के कारण बुजुर्ग आबादी का अनुपात तेजी से बढ़ा है। राज्य में 60 वर्ष से अधिक उम्र के नागरिकों का अनुपात 2011 में 12.7 प्रतिशत था, जो 2021 में बढ़कर करीब 15 प्रतिशत हो गया। अनुमान है कि 2051 तक यह आंकड़ा दोगुना हो जाएगा। विदेश प्रवास ने परिवारों और देखभाल के पारंपरिक ढांचे को पूरी तरह बदल दिया है। विदेशों में काम करने वाले बच्चे पैसे भेज सकते हैं और

डॉक्टरों से ऑनलाइन सलाह का इंतजाम कर सकते हैं, लेकिन आपात स्थिति में तुरंत मदद पहुंचाना और अकेलेपन से निपटना आज भी गंभीर चुनौती है। अकेले रहने वाले बुजुर्ग जहां दवाएं जुटाने, अस्पताल पहुंचने और वित्तीय धोखाधड़ी से बचने के लिए जूझते हैं, वहीं दूसरी तरफ बच्चों के अपने दबाव हैं।

लिहाजा असल चुनौती ऐसी सरकारी सेवाएं तैयार करने की है जो दोनों पीढ़ियों को सहारा दे सकें, न कि यह मानकर बैठ जाएं कि संतानों के भरोसे ही बुढ़ापे की पेशेवर देखभाल हो जाएगी।

*

तिरुवनंतपुरम जिले के वर्कला की एक घटना दिखाती है कि जब माता-पिता और बच्चों के बीच वित्तीय समझौते टूटते हैं, तो अंजाम कितना खौफनाक हो सकता है। कैसर से जूझ रहे 79 वर्षीय सदाशिवन और उनकी 72 वर्षीय पत्नी सुषमा को फरवरी 2025 में उनकी अपनी बेटी और दामाद ने घर से बाहर निकालकर उसपर ताला जड़ दिया। दंपती ने अपनी अचल संपत्तियां बेचकर बेटी को 35 लाख रुपये इस शर्त पर दिए थे कि यह रकम दो साल में लौटा दी जाएगी। जब पांच साल बाद भी पैसा नहीं लौटाया गया, तो पुलिस ने दखल दिया, मामला दर्ज हुआ और आखिरकार बुजुर्ग दंपती अपने घर में दोबारा दाखिल हो सके।

त्रिशूर में 80 वर्षीय थॉमस प्लाक्कन और उनकी 77 वर्षीय पत्नी रोजली को अपने बेटे और बहु द्वारा प्रताड़ित किए जाने के बाद नवंबर 2024 में अलग-अलग वृद्धाश्रमों में भेजना पड़ा। सामाजिक न्याय विभाग के दखल के बाद भरण-पोषण पंचाट ने उनके बच्चों को उनकी देखभाल के लिए पैसे जमा करने और मासिक सहायता देने का निर्देश दिया।

जुलाई 2025 में जब थॉमस का निधन हुआ, तो उनका शव वृद्धाश्रम से घर लाया गया। घर पर ताला लटका था। रिश्तेदारों, पड़ोसियों और अधिकारियों ने किसी तरह बंद घर के बाहर ही उनके अंतिम संस्कार का इंतजाम किया।

ये घटनाएं साबित करती हैं कि पारिवारिक विवाद जब हद से ज्यादा बढ़ जाता है, तब सरकारी दखल की भी सीमा होती है। गुजारे भत्ते के आदेश राहत जरूर दे सकते हैं, लेकिन वे अपने आप घर की सुरक्षा बहाल नहीं कर सकते और न ही धमकियों से बचा सकते हैं। खासकर जब बुजुर्ग अपनी संपत्ति

फोटो: गैरी लेज़िका



कानून के जरिए न तो स्नेह पैदा

किया जा सकता है और न ही

अकेलेपन को दूर किया जा सकता

है। हालांकि, यह दुर्यवहार को रोक

सकता है और उपेक्षा करने वालों को

दंडित कर सकता है

पर नियंत्रण खो चुके हों, तब आसान शिकायत प्रणाली और समय पर प्रशासनिक दखल जरूरी हो जाता है।

*

विधेयक में केयर सेंटरों के नियमन पर दिया गया जोर उतना ही अहम है, क्योंकि परिवार अब तेजी से देखभाल केन्द्रों का रुख कर रहे हैं। एर्नाकुलम में एक बुजुर्ग महिला ने सोशल मीडिया पर मिले एक वृद्धाश्रम के झांसे में आकर 35 लाख रुपये गंवा दिए (उनके बच्चे विदेश में रहते हैं)। उन्होंने अपने बैंक दस्तावेज सौंप दिए और उस केन्द्र में रहने चली गईं, जहां उन्हें तय सुविधाओं के बिना एक छोटे से कमरे में बंद रखा गया। संचालकों ने जब पैसे लौटाने से इनकार कर दिया, तब उनके परिवार ने सामाजिक न्याय विभाग का दरवाजा खटखटाया।

परिवारों के लिए अक्सर यह परखना मुश्किल होता है कि कौन सा केयर प्रोवाइडर भरोसेमंद है। भारी रकम चुकाने या वित्तीय कागजात सौंपने के बाद बुजुर्गों के पास मोलभाव की ताकत नहीं बचती। अनिवार्य

पंजीकरण, नियमित निरीक्षण, पारदर्शी अनुबंध और स्वतंत्र शिकायत निवारण तंत्र शोषण को काफी हद तक रोक सकते हैं, बशर्ते नियमों को लागू करने के लिए प्रशासन के पास पर्याप्त अमला और संसाधन हों।

यह विधेयक बुजुर्गों को उनके जाने-पहचाने परिवेश में ही जरूरी मदद के साथ सम्मान से जीने पर भी जोर देता है। सतीशन के अनुसार, किफायती होम-केयर सेवाएं, प्रशिक्षित देखभालकर्ता, मुफ्त कानूनी सहायता और सहायक उपकरणों की आसान पहुंच से परिवारों पर दबाव घटेगा और बुजुर्ग अपनी स्वायत्तता बनाए रख सकेंगे।

*

हालांकि सामाजिक कल्याण को सिर्फ बुनियादी ढांचे से नहीं आंका जा सकता। वर्ष 2016-17 तक राज्य भर में लगभग 2,000 ‘फगल वीडु’ (डे-केयर केन्द्र) खोले गए। ये केंद्र बुजुर्गों को आकर्षित करने में नाकाम रहे क्योंकि इनकी व्यवस्थाएं बुजुर्गों की वास्तविक जरूरतों के अनुकूल नहीं थीं। एक केन्द्र को बुजुर्गों के लिए अपनत्व, सामुदायिक मेल-

जोल, आवागमन की सुविधा और रोजमर्रा की व्यावहारिक मदद मुहैया करानी चाहिए।

इस कानून पर काम करने वाली प्रशासनिक अधिकारी अदीला अब्दुल्ला बताती हैं: ‘विधेयक के तहत 50 पैमानों पर आधारित एक प्रारंभिक सर्वेक्षण का प्रस्ताव है, ताकि बुजुर्गों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, उनकी कमजोरियों और कल्याणकारी योजनाओं तक पहुंच के अभाव की पड़ताल की जा सके।’ उन्होंने कहा कि इस सर्वेक्षण के नतीजे ‘स्थानीय सेवाओं और बजट को दिशा देंगे, जहां सफलता का पैमाना खोले गए केंद्रों की संख्या नहीं, बल्कि बुजुर्गों के जीवन में वास्तविक सुधार होगा।’

केरल स्वास्थ्य विज्ञान विश्वविद्यालय के ‘स्टेट रिसोर्स सेंटर फॉर ओल्डर पीपल’ के निदेशक के.एस. शाजी ने बुजुर्ग मरीजों की दिक्कतों को रेखांकित किया है: अस्पतालों में घंटों का इंतजार, बिखरी हुई स्वास्थ्य सेवाएं और बार-बार के चक्कर। उनका मानना है कि प्राथमिक व माध्यमिक स्वास्थ्य सेवाओं और घर पर मिलने वाली चिकित्सा मदद के बीच बेहतर तालमेल से गंभीर बीमारियों या अशक्त बुजुर्गों का इलाज आसान हो सकेगा।

पूर्व अतिरिक्त राज्य लोक अभियोजक पी. नारायणन ने कहा कि कानून बनाने जितना ही जरूरी उसका क्रियान्वयन है। वहीं अभियोजन महानिदेशक (डीजीपी) टी. आसफ अली ने विधेयक में सुरक्षा और कानून लागू करने के दृष्टिकोण का स्वागत किया है।

अली कहते हैं, ‘प्रभावी अमल के लिए जिला स्तरीय तंत्र, प्रशिक्षित अमला, पर्याप्त बजट और शिकायतों व आदेशों की निगरानी की स्पष्ट जवाबदेही जरूरी होगी। बुजुर्गों में इतना भरोसा हो कि वे बेखोफ उपेक्षा की शिकायत कर सकें, और अधिकारियों को भी किसी वित्तीय या शारीरिक असुरक्षा के गहराने से पहले ही मोर्चा संभालना होगा।’

सामाजिक कार्यकर्ता पी.ई. उषा का कहना है, ‘उम्र बढ़ने को सिर्फ लाचारी या पराधीनता से नहीं जोड़ना चाहिए। बुजुर्गों के पास लंबा पेशेवर अनुभव, व्यावहारिक समझ और सामाजिक स्मृति होती है जो समाज को ताकत दे सकती है। सुनियोजित तरीके से तैयार किया गया केयरगिवर्स का काडर रोजगार पैदा कर सकता है और परिवारों का सहारा बन सकता है।’

केरला ने अपनी औसत आयु बढ़ाने और मानव विकास सूचकांक को चमकाने में दशकों की मेहनत लगाई है। लंबी उम्र को सुरक्षित और गरिमामय बनाना राज्य के सामने अगली बड़ी चुनौती है। कानून किसी के दिल में प्रेम नहीं भर सकता और न अकेलेपन को मिटा सकता है। यह सिर्फ न्यूनतम मानक तय कर सकता है, देखभाल करने वालों की जवाबदेही तय कर सकता है और उपेक्षा को दंडनीय अपराध बना सकता है। ■



वोट और नोट चोरी के खिलाफ पदयात्रा

मध्य प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह तीन हजार पदयात्रियों सहित अपनी ‘सत्य, सनातन, स्वामिमान’ यात्रा पर निकले हुए हैं। वह अस्सी साल के हैं और देह की आयु को घटा बताते हुए पदयात्राओं का कीर्तिमान बनाते रहते हैं। इसके पहले 2017 में उन्होंने 3,200 किलोमीटर लंबी नर्मदा परिक्रमा की थी। इस बार वह उज्जैन के महाकालेश्वर मंदिर से शुरू होकर ओरछा स्थित रामराजा सरकार मंदिर होते हुए अयोध्या में भगवान श्रीराम के धाम तक पहुंचने वाली 930 किलोमीटर लंबी पदयात्रा पर हैं।

यात्रा के माध्यम से धार्मिक स्थलों पर श्रद्धालुओं द्वारा दिए जाने वाले दान और चढ़ावे की व्यवस्था में पारदर्शिता तथा अनियमितताओं की निष्पक्ष जांच की मांग उठाई जा रही है। इसके साथ ही यह यात्रा सत्य, सामाजिक समरसता और धार्मिक आस्था के सम्मान का संदेश भी दे रही है।

इस बार की यात्रा नर्मदा परिक्रमा की तरह गैर-राजनीतिक यात्रा न होकर घोषित रूप से राजनीतिक है, इसलिए कांग्रेसजनों का उत्साह कई गुना बढ़ा हुआ है। यात्रा का एक पक्ष यह भी है कि आम लोगों के साथ संवाद भी चल रहा है। सड़क के दोनों तरफ बड़ी संख्या में स्थानीय लोग जमा हो जाते हैं। कुछ अपने खेतों और घरों पर काम करते हुए पदयात्रा को उत्सुकता और कौतुहल के साथ निहारते हैं। आलू की पिछली फसल का गिर्रक करते हुए किसानों ने बताया कि बाजार में सही दाम न मिलने से लागत तक नहीं निकल पाई। कोल्ड स्टोरेज में आलू रखने के बावजूद उन्हें इतना कम भाव मिला कि भंडारण का कारिया तक नहीं निकल सका।

वोट चोरी और नोट चोरी के खिलाफ **दिग्विजय सिंह** की सतर-दिनी पदयात्रा के दौरान **राजेंद्र चन्द्रकान्त राय** से हुई बातचीत के कुछ अंश:



दिग्विजय सिंह की सत्य सनातन स्वामिमान यात्रा

आप जिन उद्देश्यों को लेकर पदयात्रा कर रहे हैं, उन पर कांग्रेस का क्या रुख है ?

कांग्रेस की विचारधारा इन्हीं मूल्यों पर आधारित है। सभी धर्मो का सम्मान और सामाजिक सद्भाव भारतीय समाज की बुनियादी विशेषताएं हैं। सनातन धर्म का मूल आधार और भारतीय संविधान की भावना एक-दूसरे के अनुरूप हैं। संविधान प्रत्येक नागरिक को अपने धर्म का पालन करने का अधिकार देता है। ऐसी स्थिति पैदा कर दी गई है कि भारतीय संविधान ही खतरे में पड़ गया है नागरिकों के अधिकारों पर प्रश्नचिह्न खड़े हो गए हैं। सत्ता पर एकाधिकार जमाए रखने के लिए संवैधानिक और न्यायिक संस्थाओं की गरिमा को मिटाया जा रहा है। देश के नागरिकों के मतदान का अधिकार सुनिश्चित करना चुनाव आयोग की मूल जिम्मेदारी है, पर वह तो देश के 13 करोड़ मतदाताओं को न केवल वोट से बल्कि नागरिकता से भी वंचित कर रहा है। मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार के आने के बाद चुनाव आयोग निष्पक्ष नहीं रहा। एकपक्षीय हो गया।

भाजपा हिन्दुत्व की बात करती है, यह सनातन धर्म से अलग किस तरह है ?

दिग्विजय सिंह: दोनों बिल्कुल दो अलग बातें

हैं। मैं हिन्दुत्व का समर्थक नहीं हूं और न कभी हो सकता हूं, क्योंकि हिन्दुत्व का सनातन धर्म से कोई लेना-देना नहीं है। सनातन धर्म हजारों वर्ष पुराना है, जबकि हिन्दुत्व की अवधारणा को सावरकर ने ही पहली बार राजनीतिक विचारधारा के रूप में सामने रखा था। वही पहले ऐसे व्यक्ति भी थे जिन्होंने 1923 में द्वि-राष्ट्रवाद का सांप्रदायिक विचार दिया था।

मैं हिन्दुत्व का समर्थक नहीं हूं और न कभी हो सकता हूं, क्योंकि हिन्दुत्व का सनातन धर्म से कोई लेना-देना नहीं है। सनातन धर्म हजारों वर्ष पुराना है, जबकि हिन्दुत्व की अवधारणा को सावरकर ने ही पहली बार राजनीतिक विचारधारा के रूप में सामने रखा था। वही पहले ऐसे व्यक्ति भी थे जिन्होंने 1923 में द्वि-राष्ट्रवाद का सांप्रदायिक विचार दिया था।

जो ज्ञानेश कुमार चुनावी धांधलियों के लिए बदनामी के रसातल में है, वही रामलला मंदिर के लिए ट्रस्ट निर्माण का भी असली मास्टर माइंड है

सावरकर की विचारधारा पर चलने वाले देश में धर्म के नाम पर नफरत फैला रहे हैं। विभिन्न समुदायों को एक-दूसरे के खिलाफ हिसक बना रहे हैं। धर्म के बहाने लोगों को आपस में लड़ाना सनातन धर्म की मूल भावना के विपरीत है। यह समझना जरूरी है कि गांधी को गोली क्यों मारी गई, किसने मारी और इसके पीछे उद्देश्य क्या था। गांधी की हत्या के पीछे नफरत की विचारधारा थी। सर्वधर्म समभाव की मुखालफत थी। अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ के लिए ‘फूट डालो और राज करो’ की जो नीति अपनाई थी, सावरकर और संघ ने इसे आत्मसात किया और उसका इस्तेमाल समाज में विभाजन पैदा करने के लिए आज भी किया जा रहा है।

पर भाजपा आपको हिन्दू विरोधी कहती है ?

चरित्र हत्या करना, अफवाह फैलाना और झूठ प्रोसना भाजपा के पुराने पैतरे हैं। मंदिरों का चंदा और चढ़ोत्तरी की चोरी करने वालों को मालूम नहीं है कि मेरे पैतृक निवास (राधोगढ़ के किले) में सात मंदिर हैं। चार मंदिरों में अखंड ज्योत जलती है। मैं एकादशी का व्रत करता हूं। मैंने पैदल नर्मदा परिक्रमा की है। भाजपा नेताओं से मेरा सवाल है कि वे धर्म और आस्था की बात करते हैं, उनमें से कितने लोगों ने पैदल चल कर

कविता, विचार और आत्मीयता के बीच ऋतुराज

उनके यहां जुड़े दिखते हैं सामाजिक यथार्थ, राजनीतिक अंतर्विरोध और निजी जीवन के अनुभव

शैलेन्द्र चौहान

कुछ कवि अपनी रचनाओं के माध्यम से हमारे जीवन में प्रवेश करते हैं और धीरे-धीरे उनकी कविताओं के साथ उनका व्यक्तित्व भी हमारी चेतना का हिस्सा बन जाता है। ऋतुराज मेरे लिए ऐसे ही कवि थे। उनसे मेरा संबंध लगभग साढ़े चार दशक पुराना था। इस लंबे समय में मैंने उनकी कविता को पढ़ा, उस पर विचार किया और उनके साथ बातचीत, यात्राओं तथा निजी मुलाकातों के अनेक अवसर पाए। समय के साथ हमारे बीच परिचय से आत्मीयता तक का जो संबंध बना, उसमें साहित्य की साझेदारी के साथ जीवन के अनुभवों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही। उन्हें याद करते हुए केवल एक वरिष्ठ कवि के अवदान का मूल्यांकन करना पर्याप्त नहीं लगता। उनके साथ बिताए समय, उनकी सहज उपस्थिति और उनकी कविताओं में लगातार सक्रिय रहने वाली बेचैनी को एक साथ याद करना अधिक जरूरी लगता है।

ऋतुराज से मेरा पहला संपर्क 1981 में हुआ था। उन दिनों मैं विदेशा से निकलने वाली अनियतकालीन पत्रिका ‘धरती’ का संपादन कर रहा था। पत्रिका का समकालीन जनकविता विशेषांक तैयार किया था। मैंने उसकी एक प्रति ऋतुराज को बूंदी के पते पर भेजी। उस समय उनसे मेरा कोई प्रत्यक्ष परिचय नहीं था। पत्रिका भेजने के बाद किसी प्रतिक्रिया या उत्तर की प्रतीक्षा स्वाभाविक थी, लेकिन तत्काल कोई उत्तर नहीं मिला। बाद में जब उनसे मिलना हुआ, तब यह अनुभव हुआ कि ‘धरती’ के कुछ अंक और उनमें उठाए गए सवाल उनकी स्मृति में बने हुए थे।

कुछ वर्षों बाद मेरा स्थानांतरण कोटा हुआ। तब उनसे मिलने बूंदी गया। ऋतुराज से मिलकर ऐसा नहीं लगा कि मैं किसी स्थापित कवि से औपचारिक भेंट करने आया हूं। उनमें सहज आत्मीयता थी। उनके व्यक्तित्व में एक ओर अपने समय को समझने की बेचैनी थी, दूसरी ओर जीवन के सामान्य अनुभवों के प्रति खुलापन। वे अपने कवि होने को किसी विशेष दूरी या आभामंडल में बदलने वाले व्यक्ति नहीं थे। साहित्य पर बातचीत हमारे बीच सहज रूप से होती थी, लेकिन हर बातचीत का उद्देश्य किसी निष्कर्ष पर पहुंचना नहीं होता था। कई बार साथ चलना और आसपास के संसार को देखना ही पर्याप्त होता था।

ऋतुराज का कविता-संसार भी इसी अर्थ में महत्त्वपूर्ण है। उनकी वैचारिक प्रतिबद्धता स्पष्ट थी, लेकिन वे विचार को कविता के ऊपर आरोपित नहीं करते थे। उनके यहां सामाजिक यथार्थ, राजनीतिक अंतर्विरोध, प्रकृति और निजी जीवन के अनुभव एक-दूसरे से जुड़े हुए दिखाई देते हैं। उनकी कविता में सत्ता और व्यवस्था के प्रति असहमति है, बौद्धिक पाखंड पर व्यंग्य है, ग्रामीण जीवन की गंध है और निजी संबंधों के भीतर प्रवेश करती असुरक्षा भी है।

‘हम उतर मुक्तिबोध हैं’ की कविताएं पढ़ते हुए उनकी वैचारिक बेचैनी का महत्त्वपूर्ण रूप सामने आता है। मुक्तिबोध की परंपरा का उल्लेख यहां आत्मालोचन और सामाजिक विवेक की चुनौती के रूप में भी किया जा सकता है। ऋतुराज की कविता अपने समय की विसंगतियों को पहचानती है। वह अपने वैचारिक संसार और उससे जुड़े लोगों के आचरण को भी प्रश्नांकित करती है। यहीं विशेषता उन्हें उन कवियों से अलग

करती है जिनके लिए प्रतिबद्धता प्रायः एक घोषित पहचान बनकर रह जाती है।

इस संदर्भ में उनकी कविता ‘अगन गीत’ मुझे विशेष रूप से याद आती है। वामपंथ के खंडहरों को देखने जाने से शुरू होने वाली यह कविता राजनीतिक पराजय, मोहभंग और आत्मपरीक्षण का ऐसा संसार रचती है जिसमें अतीत की आकांक्षाएं वर्तमान की विफलताओं से टकराती हैं।

ऋतुराज को केवल राजनीतिक कविताओं के आधार पर याद करना उनके रचनात्मक व्यक्तित्व को अधूरा समझना होगा। उनकी कविता में राजस्थान के ग्रामीण और वनवर्ती परिवेश का अनुभव भी गहराई से उपस्थित है। बूंदी और उसके आसपास के भूगोल से लेकर दूसरे क्षेत्रों में जीवन के विविध रूपों तक, प्रकृति उनके लिए सजावट का साधन नहीं है। धरती, वनस्पति, ऋतुएँ और जीव-जंतु मनुष्य के जीवन-संघर्ष से जुड़े हुए हैं। ‘मरूंगा नहीं’ जैसी कविता में सूखी धरती पर आक और धतूरे की प्यास जीवन की जिजीविषा का रूप ग्रहण करती है।

उनकी कविताओं में ग्रामीण जीवन का चित्र किसी रोमानी सरलता से निर्मित नहीं होता। वहां प्रकृति के प्रति लगाव है, लेकिन अभाव, श्रम और असुरक्षा की अनदेखी नहीं है। इसी तरह ‘ज्ञानीजन’ जैसी कविता में वे बौद्धिक प्रतिष्ठा और वैचारिक आचरण के बीच के अंतर्विरोधों को सामने लाते हैं।

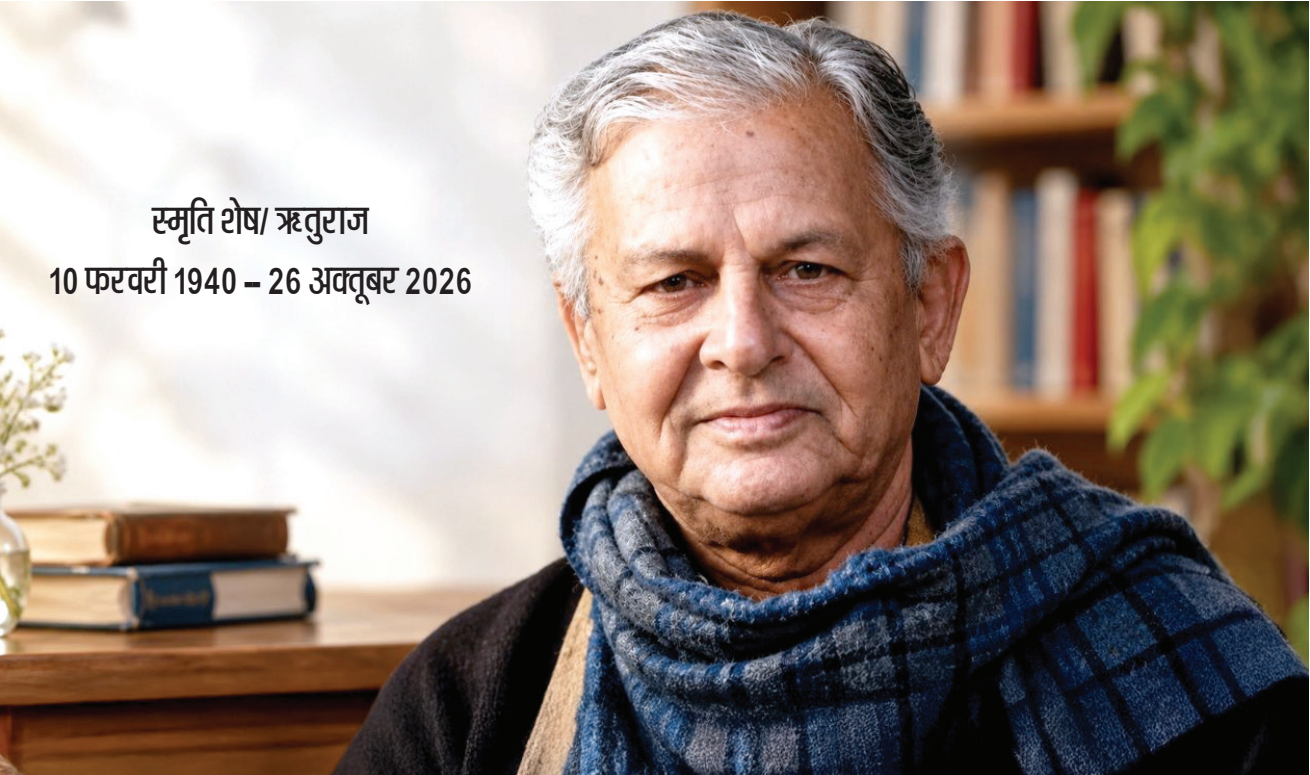
‘गांधी हिल पर’ जैसी कविता में इतिहास के प्रतीकों और वर्तमान जीवन के बीच बढ़ती दूरी का प्रश्न सामने आता है। गांधी और उनकी बकरी का प्रसंग केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि भूख, उपेक्षा और सामाजिक विषमता की ओर भी संकेत करता है।

ऋतुराज की भाषा में लोकजीवन के शब्दों, ठोस वस्तुओं, वैचारिक संकेतों और व्यंग्य का ऐसा मेल दिखाई देता है जो उनके अनुभव-संसार को विशिष्ट बनाता है। वह जब राजनीतिक क्षरण को खंडहरों, सूखी घास और हवा के रीतापन के माध्यम से व्यक्त करते हैं तो विचार दृश्य और अनुभूति में बदल जाता है। जब शब्दों और कर्मों के खंडित होने की बात करते हैं तो भाषा का विन्यास ही सामाजिक स्थिति का अर्थ खोलने लगता है। उनके यहां व्यंग्य का उद्देश्य केवल हंसाना नहीं, बल्कि सामान्य व्यवहार के भीतर छिपे अंतर्विरोधों को उजागर करना है।

हमारा संपर्क केवल कविताओं और साहित्यिक चर्चाओं तक सीमित नहीं रहा। 1991 में मेरा स्थानांतरण जयपुर हुआ, लेकिन ऋतुराज से मिलना-जुलना बना रहा। भद्रावती, नागपुर और चंडीगढ़ के निकट नालागढ़ जैसे स्थानों पर हुई मुलाकातें इस संबंध के अलग-अलग पड़ाव हैं। इन मुलाकातों में यात्राओं की परिस्थितियां, जीवन के अनुभव और साहित्य की दुनिया के बदलते रूप बातचीत का हिस्सा बनते रहे।

2001 से 2004 के बीच जब मैं नागपुर में था, ऋतुराज जयपुर स्थित मेरे घर पर ठहरे। उनके साथ मेरा संबंध भी धीरे-धीरे इसी आत्मीयता तक पहुंचा था। 2005 में उन्होंने जयपुर में मेरे घर के पास ही अपना मकान लिया। भौगोलिक निकटता ने मुलाकातों की संभावनाएं बढ़ाई और यह एहसास भी दिया कि लंबे समय से चला आ रहा साहित्यिक संबंध अब जीवन के रोजमर्रा के भूगोल में भी जगह पा चुका है।

ऋतुराज की कविताओं में सत्ता और व्यवस्था के प्रति असहमति है, बौद्धिक पाखंड पर व्यंग्य है, ग्रामीण जीवन की गंध है और निजी संबंधों के भीतर प्रवेश करती असुरक्षा भी है



स्मृति शेष/ ऋतुराज

10 फरवरी 1940 – 26 अक्टूबर 2026

2007 में मैं जयपुर छोड़कर बारਾਂ चला गया। 2015 में सेवानिवृत्ति के बाद फिर स्थायी रूप से जयपुर आ गया। इन स्थानांतरणों के बीच शहर बदलते रहे, लेकिन ऋतुराज के साथ संबंध की आत्मीयता बनी रही।

ऋतुराज की कविताओं में निजी संवेदना का पक्ष भी व्यापक मानवीय अनुभव से जुड़ा हुआ है। ‘प्रेम की भूतकथा’ जैसी कविता में बीते संबंधों और उनसे जुड़ी रिक्तता का अनुभव मिलता है। यहां असुरक्षा का स्रोत राजनीतिक संस्थाएं नहीं, बल्कि मनुष्य के निजी संबंध हैं। फिर भी इन दोनों क्षेत्रों को जोड़ने वाला तत्त्व मनुष्य को नश्वरता और उसके संबंधों की अनिश्चितता है।

ऋतुराज को याद करते हुए उनकी कविता और उनके व्यक्तित्व के बीच कोई कृत्रिम विभाजन नहीं कर पाता। उनकी कविताओं में जिस आत्मालोचन, असहमति और मानवीय जिजीविषा की पहचान होती है, उनके साथ बिताए समय में भी उसकी प्रतिध्वनि सुनाई देती है। वह ऐसे कवि थे जिनकी रचनाओं को पढ़ते हुए केवल उनके विचारों से सहमत होना पर्याप्त नहीं था। वे उन सवालों की ओर भी ले जाती थीं जिनसे बचकर निकलना आसान नहीं होता। विचार और आचरण के बीच की दूरी, प्रतिबद्धता का निजी लाभ में बदल जाना, पुरानी राजनीतिक विरासत के सामने खड़ी नई पीढ़ी की निराशा और प्रतिकूल परिस्थितियों में जीवन के पक्ष में खड़े रहने की जिद—ये सब उनकी कविता के स्थायी सरोकार हैं।

किसी आत्मीय व्यक्ति के जाने के बाद उसके साथ बिताया समय समाप्त नहीं हो जाता, लेकिन उसका स्वरूप बदल जाता है। पहले जिन बातों को दोबारा कहे जाने की जरूरत नहीं होती थी, वे अब स्मरण के सहारे लौटती हैं। जिन जगहों पर साथ चला गया था,

नर्मदा परिक्रमा की है, बताएं? असल में जो उनकी बेईमानियों का विरोध करता है, उसे वे हिन्दू-विरोधी कहने लगते हैं।

राम मंदिर में चढ़ावा चोरी जैसे घोटाले हो रहे हैं, क्या आम जन इसे गंभीरता से ले रहा है ?

बहुत गंभीरता से ले रहा है। जिस दिन से चढ़ावा चोरी उजागर हुई है, मंदिर में आने वाले प्रतिदिन के चढ़ावे में बहुत ज्यादा कमी आ गई है। यही तथ्य बताता है कि धार्मिक आस्था को कितनी बड़ी ठेस लगी है। जो ज्ञानेश कुमार चुनावी धांधलियों के लिए बदनामी के रसातल में है, वही रामलला मंदिर के लिए ट्रस्ट निर्माण का भी असली मास्टर माइंड है। वह ‘नोट चोरी और वोट चोरी’ दोनों में शामिल है। मंदिर निर्माण से जुड़े ट्रस्ट में विश्व हिन्दू परिषद से जुड़े लोगों को प्रमुखता दी गई। राम मंदिर निर्माण के लिए भूमि आवंटन और ट्रस्ट गठन की प्रक्रिया को लेकर बहुत सवाल हैं। तत्कालीन प्रधानमंत्री पीवी नरसिंह राव के कार्यकाल में मंदिर निर्माण के लिए भूमि आवंटित की गई थी और उस समय ट्रस्ट में कांग्रेस के किसी नेता को शामिल न करते हुए साधु-संतों को जगह दी गई थी। मैं राम मंदिर निर्माण के लिए जुटाए गए चंदे और सोने-चांदी की ईंटों का हिसाब सार्वजनिक किए जाने की मांग करता हूं, इस पूरी प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर अनियमितताएं हुईं। राम मंदिर आंदोलन के नाम पर लोगों ने श्रद्धा के साथ दान दिया था, इसलिए जरूरी है कि दान में मिली रकम और सामग्री का पूरा हिसाब सामने आए। राम मंदिर समिति के पूर्व अकाउंटेंट महिपाल सिंह ने ही सबसे पहले अनियमितताओं की शिकायत की थी, पर शिकायत करने के बाद महिपाल सिंह को ही नौकरी से निकाल दिया गया।

आप ने नर्मदा परिक्रमा की थी और मध्य प्रदेश की भाजपा सरकार चली गई थी, क्या इस बार मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश दो राज्यों की सरकारें जाने वाली हैं ?

(उठका लगाते हुए) मैं बड़ी विनम्रता से कहता हूं कि मेरे कारण सरकारें न तो जाती हैं और न ही आती हैं। हम तो जनता के मामलों को जनता की अदालत में ले जाते हैं। जनता उन्हें सुनती है, गुनती है और अपना फैसला करती है। जन-पालिका का न्याय ही सर्वोपरि होता है, वोट चोरी से उसकी अवमानना करने वालों को उचित सजा मिलेगी। मैं सरकार से कहता हूं कि चंदा चोरों को पकड़ो, जेल भेजो, उन्हें बचाओ मत। वोट चोरी बंद करो। ईवीएम हमें नहीं चाहिए। हमें वैलेट पेपर से चुनाव चाहिए। ■

मैं बड़ी विनम्रता से कहता हूं कि मेरे कारण सरकारें न तो जाती हैं और न ही आती हैं। हम तो जनता के मामलों को जनता की अदालत में ले जाते हैं। जनता उन्हें सुनती है, गुनती है और अपना फैसला करती है। जन-पालिका का न्याय ही सर्वोपरि होता है, वोट चोरी से उसकी अवमानना करने वालों को उचित सजा मिलेगी। मैं सरकार से कहता हूं कि चंदा चोरों को पकड़ो, जेल भेजो, उन्हें बचाओ मत। वोट चोरी बंद करो। ईवीएम हमें नहीं चाहिए। हमें वैलेट पेपर से चुनाव चाहिए। ■



पर्वों के उल्लास...और कड़ी मेहनत का महीना

कार्तिक के साथ ही दीपावली और छठ के धूम-धड़ाके और जगर-मगर के बीच होता है और भी बहुत कुछ

कृष्ण प्रताप सिंह

लीजिए, देखते ही देखते कार्तिक आ पहुंचा। अब हम दीपावली और छठ वगैरह के धूम-धड़ाके, जगर-मगर और उल्लास में डूबेंगे। लेकिन क्या आपको मालूम है कि कार्तिक सिर्फ इन पर्वों को ही नहीं लाता, और भी 'बहुत कुछ' साथ-साथ ले आता है। इतना कि उस 'बहुत कुछ' के लिए हमें उसका बहुत-बहुत कृतज्ञ होना चाहिए।

इस 'बहुत कुछ' से पहले उसके नामकरण को लेकर बाबत चली आती एक पौराणिक मान्यता की बाबत जान लीजिए। भारतीय संवत्सर का आठवां महीना है वह और उक्त मान्यता कहती है कि उसको उसका कार्तिक नाम भगवान शिव ने अपने पराक्रमी पुत्र कार्तिकेय के नाम पर दिया था।

कथा के मुताबिक, वज्रगांस्तु का एक पुत्र था तारकाकासुर। उसको वरदान था कि भगवान् शिव के पुत्र के अलावा उसे कोई और नहीं मार सकेगा। यह वरदान उसके लिए अमरत्व के वरदान जैसा था, क्योंकि तब तक शिव की भार्या सती ने अपने पिता दक्ष प्रजापति द्वारा किए जा रहे यज्ञ में अपने पति (यानी भगवान् शिव) के अगमन से क्षुब्ध होकर उस यज्ञ के कुंड में ही आत्मदाह कर लिया था और इससे लेकर तान्दव नृत्य करने के बाद शिव पूर्णतः वीरगात्र हो गए थे।

इन हालात में तारकासुर असुरों का अधिपति बना तो पूरी तरह आश्वस्त था कि अब जब शिव की पत्नी ही नहीं रही तो न उनका कोई पुत्र उत्पन्न होगा और न ही उसे मारेगा। फिर तो मौत उसके पास आ ही नहीं सकेगी।

आगे चलकर खुद को अमर मानते हुए वह तब और निर्भय हो गया, जब उसके नाना अत्याचारों से त्रस्त देवता कामदेव और रति के सहारे भगवान शिव को नए वैवाहिक जीवन के प्रति आकर्षित करने के जतन करने लगे और शिव ने आकर्षित होने के बजाय अपना तीसरा नेत्र खोलकर कामदेव को ही भस्म कर डाला।

लेकिन ताराकसुर का दुर्भाग्य कि मन ही मन शिव को अपना पति मान चुकी पार्वती उन्हें पाने के लिए कठिन तपस्या में रत हो गईं तो शिव ने प्रसन्न होकर उनसे विवाह कर लिया। अंतर्गत, दोनों के संयोग से उनके पुत्र का जन्म हुआ तो उसका नाम कार्तिकेय रखा गया। यही कार्तिकेय बाद में देवताओं के सेनापति बने और उन्होंने ताराकसुर का वध किया तो शिव ने प्रसन्न होकर उस वक्त चल रहे महीने का नाम उनके नाम पर कार्तिक रख दिया।

कार्तिक को पूर्णिमा को अब स्नान का बड़ा पर्व माना और विश्वास किया जाता है कि इस दिन पवित्र नदियों में स्नान करने वाला स्नान प्रचुर पुण्य फलदायी होता है। दूसरी ओर इसकी अमावस्या को मनाए जाने वाले दीपावली के पर्व को अंधेरे पर प्रकाश की विजय के प्रतीक के रूप में लिया जाता है और उसकी जगर-मगर को लेकर कई किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं।

मुख्य रूप से उसे अयोध्यावासियों द्वारा लंका पर विजय प्राप्त कर वनवास से लौटे भगवान राम के श्रृंगार में थी के दीये जलाने से जोड़ा जाता है। दीपावली सुख-समृद्धि की देवी लक्ष्मी की पूजा का भी दिन है। उससे ग्यारह दिन पहले करवा चौथ का और उसके बाद चार दिनों तक चलने वाला छठ महापर्व भी कार्तिक की ही अमावस्य है। करवा चौथ की मूल प्रेरणा सावित्री और सत्यवान की बहुप्रचारित कथा है, जिसमें अपने पातिव्रत धर्म के बल पर सावित्री अपने पति सत्यवान के यमराज द्वारा हरि गए प्राण को वापस पा लेती हैं। छठ समारोहपूर्वक छठ मैया और सूर्यदेवी की उपासना का महापर्व है। छठ से पहले दीपावली के ठीक दो दिन बाद यम द्वितीया



दीपावली के छठवें दिन छठ और ग्यारहवें दिन देवोत्थानी या देवप्रबोधिनी एकादशी तक आस्था और उत्सव का माहौल रहता है। काशी की देव दीपावली भी इसी कड़ी में है।



का पर्व मनाया जाता है, जिसे भाई दूज या भातृ द्वितीया के नाम से भी जाना जाता है। इस दिन बहनें अपने भाइयों के माथे पर तिलक लगाकर उनकी लंबी उम्र और खुशहाली की कामना करती हैं।

लेकिन कार्तिक की पहचान हमेशा ऐसी नहीं रही और आज हम उसे जिस रूप में पहचानते हैं, वह उसे कई बदलावों के बाद हासिल हुआ है। जब गाँवों में पशु आवाज़ नहीं हुए थे और पालतू हुआ करते थे, साथ ही मां-बाप अपने पशुओं गए बेटों को पत्रों में खेती-बारी के बाद परानी से पहले पढ़ें। एक कुशल-भम लिखा करते थे, तो कार्तिक मई और बली बंदों का महीना हुआ करता था।

तब मर्दों की पहचान उनकी मूंछ तो बढ़ीं यानी बैलों की पहचान उनकी पूंछ से हुआ करती थी और कार्तिक के कम-से-कम तेरह दिन उनके दिन-रात एक करके एड़ी-चोटी का पसीना एक करने के दिन हुआ करते थे। कहावत थी : तेरह कार्तिक तीन अषाढ़।

जब की यह कहावत है, तब सिंचाई के ज्यादा साधन होते नहीं थे। इसलिए खरीफ की फसल कटते ही खेतों की नमी को आगली फसल के लिए सुरक्षित रखने हेतु धूप में उसके सूख जाने से पहले यानी मुंह अंधेरे ही जोतकर पाटा चलाना पड़ता था। खेत की मिट्टी भुरभुरी होने से पहले नमी चली गई तो उसे बीज बोने योग्य बनाने के लिए ढेले फोड़ते-फोड़ते नाक में दम हो जाता था।

कई कहावतों में 'आदेश' था कि 'कार्तिक मास रात हर जोतो, टांग पसारे घर मत सूतो'। साथ ही चेतावनी भी थी कि कार्तिक महीने को इधर-उधर घूमने, मालपुआ खाने या जुआ खेलने में बिता दिया तो चैत में खेत-खलिहान से न बखार में अनाज नहीं आएगा और नहीं आया तो सावन भादों के कटिने दिनों में पपी ऐसी को भरना कौन कहे, पालन भी बहुत मुश्किल हो जाएगा। ऐसी कोई नौबत न आये, इसकी

लोकोजीवन में इस पूरे महीने शरीर पर तेल न लगाने और आंवले के पेड़ के नीचे भोजन पकाने-खाने से पूरे कुटुंब के लिए बैक्टीरिया के द्वारा खुल जाने की बात कही जाती है

प्रार्थना करने के लिए अनेक श्रद्धालु इस पूरे महीने तुलसी के पौधों के समक्ष दीये जलाते और तुलसी माता का विवाह रचाते हैं।

बुन्देलखंड और ब्रज वगैरह में इस विवाह को लेकर कई भजन एवं लोकगीत प्रचलित हैं। उनमें तुलसी कभी लक्ष्मी बनकर विष्णु की, तो कभी गौरी बनकर भोले की, कभी सीता बनकर राम की तो कभी शोभा बनकर कान्हा की तुलसीया बनती हैं। तब सुहागिनें अपने गीतों में उनसे कहती हैं: हरी-हरी तुलसा तू खरे अख्यो, तेको जमुना स्नान करइयो हो राम। इतना ही नहीं, वे तुलसी के बारे में बताती हैं : रहती नाय तुलसा राम के बिना, अरे राम के बिना घनश्याम के बिना. पौढत नाय तुलसा...।...आंगन में तुलसा मेरी पैरों में तुलसा, तो छज्जे बीच बिजयें तुलसा...हाथन में तुलसा धोये शोषा पै तुलसा, तो हरिदय बीच विषयें तुलसा। वे तुलसी की तुलसी महागानों, तो हारि या शिव की पटरनी और विन्ध्यचल की रानी कहकर उनकी अस्थर्थना भी करती हैं।

दीपावली क ग्यारहवें दिन देवोत्थानी या देवप्रबोधिनी एकादशी आती है, तो भगवान विष्णु अपनी चार महीने की योगनिद्रा से जागते हैं। तब गन्ने से बने मंडप में उनके शालिग्राम स्वरूप से तुलसी का विवाह कराया जाता है।

तुलसी के विवाह की भी एक रोचक कथा है। यह कि तुलसी पिछले जन्म में वृद्ध के रूप में राक्षस कुल में जन्मी थीं और दानवरज जन्म की पत्नी होने के बावजूद भगवान विष्णु की अन्य भक्त थीं। विष्णु ने उनको बदनाम दे रख था कि जब तक वह पतिव्रता के रूप में उनकी पूजा में रत रहेगी, उसके पति का बाल भी बँका नहीं होगा। इससे जलंधर को सुखसा कवच-सा हासिल हो गया था और वह इतना मनबद्ध हो चला कि उसने एक बार विष्णु को ही युद्ध के लिए ललकार दिया था।

अनंतर, उसने देवताओं से युद्ध ठान लिया और देवता

उसके आगे पूरी तरह बेबस हो चले तो शिव को साथ लेकर वे विष्णु के पास गए और उनसे सहायता की याचना की। इस पर विष्णु जलंधर का रूप धरकर वृन्दा के महल में गए और उनका पतिव्रत भंग कर दिया। फिर क्या था, शिव ने जलंधर का सिर उसके धड़ से अलग करने में देर नहीं की।

वृन्दा की गोद में आ गिरे जलंधर के कटे हुए सिर से निकली आवाज ने विष्णु के छल का भांडा फोड़ दिया तो योगेश्वर को शोष से भरी वृन्दा ने छल से अपना सतीत्व भंग करने के विष्णु के अग्रिम को अक्षय्य अताकर उन्हें पत्थर हो जाने का शाप दे दिया। इससे देवताओं में हाहाकार मच गया और उन्हें लगा कि वे जीती हुई बाजी हार गए हैं। तब वे प्रार्थनाओं पर उतर आए तो द्रुवित्र होकर वृन्दा ने अपना शाप वापस ले लिया और सती हो गईं। उनकी चिता की राख से एक पौधा उगा, जिसका नाम तुलसी रखा गया और उसे वृन्दा का ही रूप माना जाने लगा।

कार्तिक की पूर्णिमा को त्रिपुरी पूर्णिमा भी कहते हैं क्योंकि शिव इसी दिन त्रिपुरारी नामक असुर का अंत कर त्रिपुरा को बने थे। यह पूर्णिमा गुप्तानाक का जन्मदिन होने के ब्यजन से सिद्ध धर्म के अनुयायियों का गुरुपर्व या प्रकाश पर्व भी है। ब्रज में इस पूर्णिमा का एक खास स्तनन गीत है: जाणिये ब्रजराज कुंकुब भोर भये अंगना, चिई जागे चिरैया जागे पंछी चले सुखिया, गैल के बढीही जागे गोदी जागे ललना, संग की साव सचिया चाली हमहू चाली जमना।

लोकजीवन में इस पूरे महीने शरीर पर तेल न लगाने और आंवले के पेड़ के नीचे भोजन पकाने-खाने से पूरे कुटुंब के लिए बैकुंठ के द्वार खुल जाने की बात कही जाती है। आपदाग्रस्त के विपरीत कार्तिक में वर्षा को अनहोनी का पर्याय माना जाता है। और कहा जाता है कि कार्तिक की छांट (यानी वर्षा) हकिम की डाट, भड़पों की आँट (अनवन) और बनियों की नाट (उधर देने से इनकार) जितनी ही बुरी होती है। ■



नेहरू
सेंटर
ऑडिटोरियम

वेस्टर्न एक्सप्रेसवे पर
मुंबई के हृदयस्थल में,
बीकेसी से सटे,
एयरपोर्ट के पास

इन सबके लिए सर्वोत्तम:

- कॉरपोरेट/एचआर मीटिंग, सेमिनार या ट्रेनिंग सेशंस
- व्याख्यान
- बुक लॉन्च/ बुक रीडिंग
- पैनल डिस्कशन
- साहित्यिक/सांस्कृतिक कार्यक्रम

ऑडिटोरियम उपलब्ध है

-पूरा दिन सुबह 10 बजे से शाम 8 बजे

-आधा दिन सुबह 10 बजे से दोपहर 2 बजे या शाम 4 बजे से शाम 8 बजे



बुकिंग के लिए कृपया संपर्क करें: +91 22-26470102, 8482925258

या हमें लिखें: contact@nehrucentre.com

नेहरू सेंटर ऑडिटोरियम, दूसरा फ्लोर, एजेएल हाउस, 608/1ए, प्लॉट नं. 2, एस. नं. 341, पीएफ ऑफिस के पास, बांद्रा, मुंबई- 400051